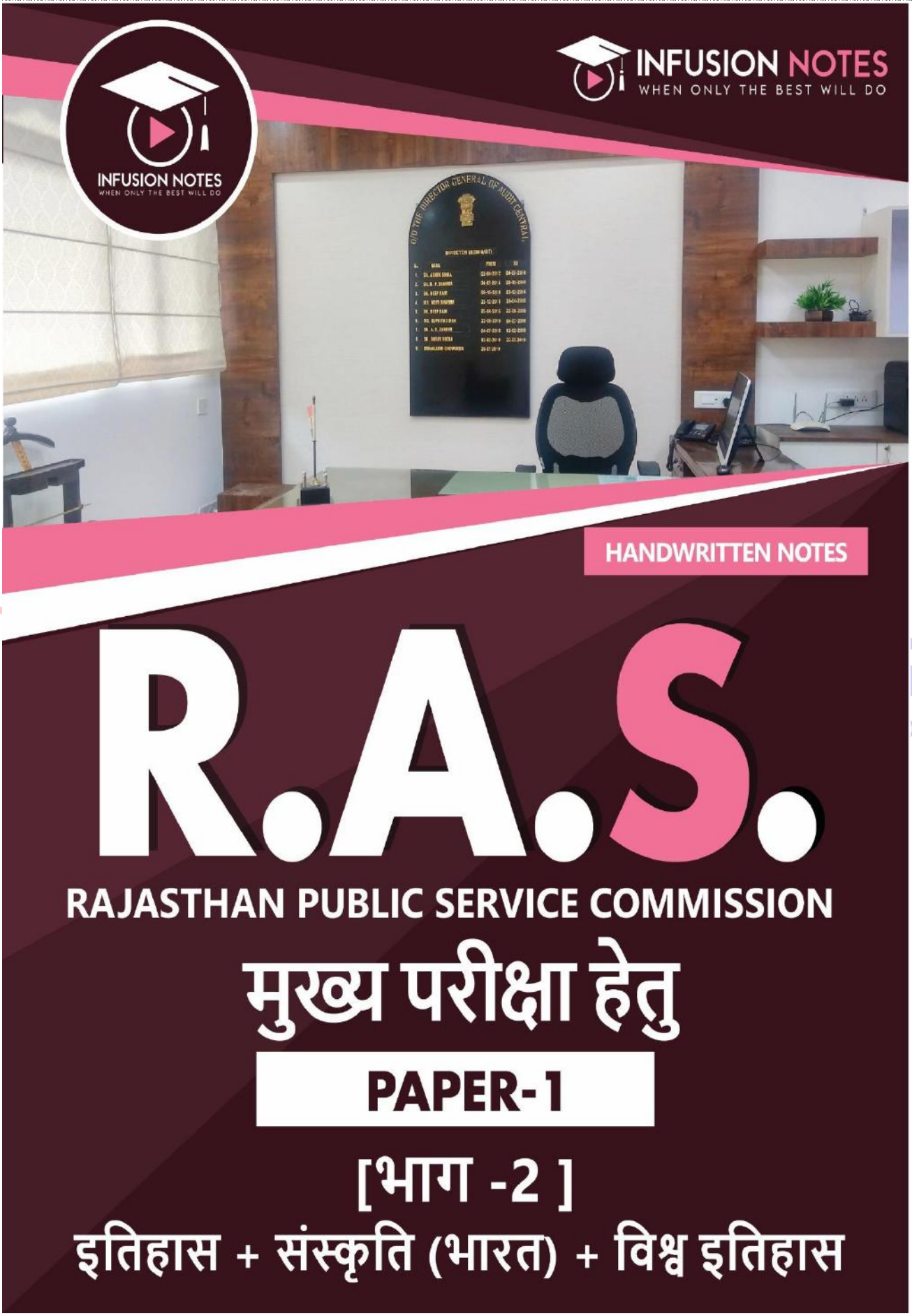
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO
HANDWRITTEN NOTES
R.A.S.
RAJASTHAN PUBLIC SERVICE COMMISSION
मुख्य परीक्षा हेतु
PAPER-1
[भाग -2]
इतिहास + संस्कृति (भारत) + विश्व इतिहास

खंड ब- भारतीय इतिहास एवं संस्कृति -

अध्याय - 1 भारतीय धरोहर : सिन्धु सभ्यता से लेकर ब्रिटिश काल तक के भारत की ललित कलाएँ, प्रदर्शन कलाएँ , वास्तुकला एवं साहित्य।

- सिन्धु घाटी सभ्यता की कला एवं संस्कृति
- बुद्धकालीन कला
- मौर्य युगीन कला एवं संस्कृति
- सातवाहन वंश की कला एवं संस्कृति
- पाल कला
- गुप्त युगीन कला
- दिल्ली संतनत काल में कला एवं संस्कृति
- मुग़ल कालीन एवं ब्रिटिश कालीन कला एवं संस्कृति
- साहित्य इत्यादि

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

अध्याय – 2 प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत के धार्मिक आन्दोलन और धर्म दर्शन।

धार्मिक आन्दोलन -

- बौद्ध धर्म , जैन धर्म, शैव धर्म, वैष्णव धर्म,
- शंकराचार्य, रामानन्द कबीर, संत रविदास गुरु नानक चैतन्य महाप्रभु नामदेव इत्यादि
- भारतीय दर्शन ,सांख्यदर्शन, योगदर्शन, न्याय दर्शन, वैशेषिक दर्शन, मीमांसा , वेदान्त, सूफी आंदोलन इत्यादि

अध्याय – 3 19वीं शताब्दी के प्रारंभ से 1965 ईस्वी तक आधुनिक भारत का इतिहास: महत्वपूर्ण घटनाक्रम, व्यक्तित्व और मुद्दे।

अध्याय – 4 भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन - इसके विभिन्न चरण व धाराएं , प्रमुख योगदानकर्ता और देश के भिन्न – भिन्न भागों से योगदान।

अध्याय – 5 19वीं -20वीं शताब्दी में सामाजिक - धार्मिक सुधार आन्दोलन।

अध्याय – 6 स्वातंत्र्योत्तर सुदृढ़ीकरण और पुनर्गठन- देशी रियासतों का विल्य तथा राज्यों का भाषायी आधार पर पुनर्गठन।

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

खंड स- आधुनिक विश्व का इतिहास (1950 ईस्वी तक)

अध्याय – 1 पुनर्जागरण व धर्म सुधार एवं वाणिज्यवाद

अध्याय – 2 अमेरिका में स्वतंत्रता संग्राम, फ्रांसीसी क्रांति 1789 ईस्वी व औद्योगिक क्रांति

अध्याय – 3 एशिया व अफ्रीका में साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद।

अध्याय – 4 विश्व युद्धों का प्रभाव।

नोट -

प्रिय छात्रों, Infusion Notes के RAS MAINS के sample notes आपको पीडीऍफ़ format में "फ्री" में दिए जा रहे हैं और complete Notes आपको Infusion Notes की website या (Amazon/Flipkart) से खरीदने होंगे जो कि आपको hardcopy यानि बुक फॉर्मेट में ही मिलेंगें | किसी भी व्यक्ति को sample पीडीऍफ़ या complete Course की पीडीऍफ़ के लिए भुगतान नहीं करना है | अगर कोई ऐसा कर रहा है तो उसकी शिकायत हमारे Phone नंबर 8233195718, 0141-4045784 पर करें, उसके खिलाफ क़ानूनी कार्यवाई की जाएगी |

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

अध्याय – I

भारतीय धरोहर :- सिन्धु सभ्यता से लेकर ब्रिटिश काल तक के भारत की ललित कलाएं, प्रदर्शन कलाएं, वास्तुकला एवं साहित्य

- **सिंधु घाटी सभ्यता की कला एवं संस्कृति -**

प्रिय दोस्तों, सिन्धु नदी की घाटी में कला का उद्भव ईसा पूर्व तीसरी सहस्राब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ था। इस सभ्यता के विभिन्न स्थलों से कला के जो रूप प्राप्त हुए हैं, उनमें प्रतिमाएँ, मुहरें, मिट्टी के बर्तन, आभूषण, पकी हुई मिट्टी की मूर्तियाँ आदि शामिल हैं। उस समय के कलाकारों में निश्चित रूप से उच्च कोटि की कलात्मक सूझ-बूझ और कल्पनाशक्ति विद्यमान थी। उनके द्वारा बनाई गई मनुष्यों तथा पशुओं की मूर्तियाँ अत्यंत स्वाभाविक किस्म की हैं क्योंकि उनमें अंगों की बनावट असली अंगों जैसी ही है। मृणमूर्तियों में जानवरों की मूर्तियों का निर्माण बड़ी सूझ-बूझ और सावधानी के साथ किया गया था।

सिंधु घाटी सभ्यता के दो प्रमुख स्थल हड़प्पा और मोहनजोदड़ो नामक दो नगर थे, जिनमें से हड़प्पा उत्तर में और मोहनजोदड़ो दक्षिण में सिंधु नदी के तट पर बसे हुये थे। ये दोनों नगर सुंदर नगर नियोजन की कला के प्राचीनतम उदाहरण थे। इन नगरों में रहने के मकान, बाजार, भंडार घर, कार्यालय, सार्वजनिक स्नानागार आदि सभी अत्यंत व्यवस्थित रूप से यथास्थान बनाए गए थे। इन नगरों में जल निकासी की व्यवस्था भी काफी विकसित थी। हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो इस समय पाकिस्तान में स्थित हैं। कुछ अन्य महत्वपूर्ण स्थलों से भी हमें कला-वस्तुओं के नमूने मिले हैं, जिनके नाम हैं-लोथल और धौलावीरा (गुजरात), राखीगढ़ी (हरियाणा), रोपड (पंजाब) तथा कालीबंगा (राजस्थान)।

FREE SAMPLE

पत्थर की मूर्तियाँ

हड़प्पाई स्थलों पर पाई गईं मूर्तियाँ, भले ही वे पत्थर, कांसे या मिट्टी की बनी हों, संख्या की दृष्टि से बहुत अधिक नहीं हैं पर कला की दृष्टि से उच्च कोटि की हैं। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में पाई गईं पत्थर की मूर्तियाँ त्रि-आयामी वस्तुएं बनाने का उत्कृष्ट उदाहरण हैं। पत्थर की मूर्तियों में दो पुरुष प्रतिमाएं बहुचर्चित हैं, जिनमें से एक पुरुष धड़ है, जो लाल चूना पत्थर का बना है और दूसरी दाढ़ी वाले पुरुष की आवक्ष मूर्ति है, जो सेलखड़ी की बनी है।

दाढ़ी वाले पुरुष को धार्मिक व्यक्ति माना जाता है। इस आवक्ष एक मूर्ति को शॉल ओढ़े हुए दिखाया गया है। शॉल बाएं कंधे के ऊपर से और दाहिनी भुजा के नीचे से डाली गई है। शॉल त्रिफुलिया नमूनों से सजी हुई है। आँखें कुछ लंबी और आधी बंद दिखाई गई हैं, मानों वह पुरुष ध्यानावस्थित हो । नाक सुंदर बनी हुई है और होंठ कुछ आगे निकले हुए हैं जिनके बीच की रेखा गहरी है। दाढ़ी-मूँछ और गलमुच्छे चेहरे पर उभरी हुई दिखाई गई हैं। कान सीप जैसे दिखाई देते हैं और उनके बीच में छेद है। बालों को बीच की मांग के द्वारा दो हिस्सों में बाँटा गया है और सिर के चारों ओर एक सादा बना हुआ फीता बंधा हुआ दिखाया गया है। दाहिनी भुजा पर एक बाजूबंद है और गर्दन के चारों ओर छोटे-छोटे छेद बने हैं जिससे लगता है कि वह हार पहने हुए हैं।

कांसे की ढलाई

हड़प्पा के लोग कांसे की ढलाई बड़े पैमाने पर करते थे और इस काम में प्रवीण थे। इनकी कांस्य मूर्तियाँ कांसे को ढालकर बनाई जाती थीं। इस तकनीक के अंतर्गत सर्वप्रथम मोम की एक प्रतिमा या मूर्ति बनाई जाती थी। इसे चिकनी मिट्टी से पूरी तरह लीपकर सूखने के लिए छोड़ दिया जाता था। जब वह पूरी तरह सूख जाती थी तो उसे गर्म किया जाता था और उसके मिट्टी के आवरण में एक छोटा सा छेद बनाकर उस छेद के रास्ते सारा पिघला हुआ मोम बाहर निकाल दिया जाता था। इसके बाद चिकनी मिट्टी के खाली सांचे में उसी छेद के रास्ते पिघली हुई धातु भर दी जाती थी। जब वह धातु ठंडी होकर ठोस हो

जाती थी तो चिकनी मिट्टी के आवरण को हटा दिया जाता था। कांस्य में मनुष्यों और जानवरों दोनों की ही मूर्तियाँ बनाई गई हैं। मानव मूर्तियों का सर्वोत्तम नमूना है एक लड़की की मूर्ति, जिसे नर्तकी के रूप में जाना जाता है। कांसे की बनी हुई जानवरों की मूर्तियों में भैंस और बकरी की मूर्तियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भैंस का सिर और कमर ऊँची उठी हुई है तथा सींग फैले हुए हैं। सिंधु सभ्यता के सभी केंद्रों में कांसे की ढलाई का काम बहुतायत में होता था।

मृणमूर्तियाँ (टेराकोटा)

सिंधु घाटी के लोग मिट्टी की मूर्तियाँ भी बनाते थे लेकिन वे पत्थर और कांसे की मूर्तियों जितनी बढ़िया नहीं होती थीं। सिंधु घाटी की मूर्तियों में मातृदेवी की प्रतिमाएं अधिक उल्लेखलीय हैं। कालीबंगा और लोथल में पाई गई नारी मूर्तियाँ हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में पाई गई मातृदेवी की मूर्तियों से बहुत ही अलग तरह की हैं। मिट्टी की मूर्तियों में कुछ दाढ़ी-मूँछ वाले ऐसे पुरुषों की भी छोटी-छोटी मूर्तियाँ पाई गई हैं, जिनके बाल गुंथे हुए (कुंडलित) हैं, जो एकदम सीधे खड़े हुए हैं, टांगें थोड़ी चौड़ी हैं और भुजाएं शरीर के समानांतर नीचे की ओर लटकी हुई हैं। ठीक ऐसी ही मुद्रा में मूर्तियाँ बार-बार पाई गई हैं, जिससे यह प्रतीत होता है कि ये किसी देवता की मूर्तियाँ हैं। एक सींग वाले देवता का मिट्टी का बना मुखौटा भी मिला है। इनके अलावा, मिट्टी की बनी पहिएदार गाड़ियाँ, छकड़े, सीटियाँ, पशु-पक्षियों की आकृतियाँ, खेलने के पासे, गिट्टियाँ, चक्रिका (डिस्क) भी मिली हैं।

मुद्राएँ (मुहरें)

- पुरातत्वविदों को हज़ारों की संख्या में मुहरें (मुद्राएं) मिली हैं, जो आमतौर पर सेलखड़ी और कभी-कभी गोमेद, चकमक पत्थर, तांबा, कांस्य और मिट्टी से बनाई गई थीं। उन पर एक सींग वाले साँड़, गैंडा, बाघ, हाथी, जंगली भैंसा, बकरा, भैंसा आदि पशुओं की सुंदर आकृतियाँ बनी हुई थीं। इन आकृतियों में प्रदर्शित विभिन्न स्वाभाविक मनोभावों की अभिव्यक्ति विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन मुद्राओं को तैयार करने का उद्देश्य मुख्यतः

वाणिज्यिक था। ऐसा प्रतीत होता है कि ये मुद्राएं बाजूबंद के तौर पर भी कुछ लोगों द्वारा पहनी जाती थीं जिनसे उन व्यक्तियों की पहचान की जा सकती थी, जैसे कि आजकल लोग पहचान पत्र धारण करते हैं। हड़प्पा की मानक मुद्रा 2x2 इंच की वर्गाकार पटिया होती थी, जो आमतौर पर सेलखड़ी से बनाई जाती थी। प्रत्येक मुद्रा में एक चित्रात्मक लिपि खुदी होती थी जो अभी तक पढ़ी नहीं जा सकी है। कुछ मुद्राएँ हाथीदांत की भी पाई गई हैं। मुद्राओं के डिज़ाइन अनेक प्रकार के होते थे पर अधिकांश में कोई जानवर, जैसे कि कूबड़दार या बिना कूबड़ वाला साँड़, हाथी, बाघ, बकरे और दैत्याकार जानवर बने होते हैं। उनमें कहीं-कहीं पेड़ों और मानवों की आकृतियाँ भी बनी पाई गई हैं। इनमें सबसे अधिक उल्लेखनीय एक ऐसी मुद्रा है जिसके केंद्र में एक मानव आकृति और उसके चारों ओर कई जानवर बने हैं। इस मुद्रा को कुछ विद्वानों द्वारा पशुपति मुद्रा कहा जाता है (आकार 1/2 से 2 इंच तक के वर्ग या आयत के रूप में) जबकि कुछ अन्य इसे किसी देवी की आकृति मानते हैं। इस मुद्रा में एक मानव आकृति पालथी मारकर बैठी हुई दिखाई गई है। इस मानव आकृति के दाहिनी ओर एक हाथी और एक बाघ (शेर) है जबकि बाँयी ओर एक गैंडा और भैंसा दिखाए गए हैं। इन पशुओं के अलावा, स्टूल के नीचे दो बारहसिंगे हैं। इस तरह की मुद्राएं 2500-1900 ई.पू. की हैं और ये सिंधु घाटी के प्राचीन नगर मोहनजोदड़ो जैसे अनेक पुरास्थलों पर बड़ी संख्या में पाई गई हैं। इनकी सतहों पर मानव और पशु आकृतियाँ उत्कीर्ण हैं।

- इन मुद्राओं के अलावा, तांबे की वर्गाकार या आयताकार पट्टियाँ (टैबलेट) पाई गई हैं, जिनमें एक ओर मानव आकृति और दूसरी ओर कोई अभिलेख अथवा दोनों ओर ही कोई अभिलेख है। इन पट्टियों पर आकृतियाँ और अभिलेख किसी नोकदार औजार (छेनी) से सावधानीपूर्वक काटकर अंकित किए गए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ताम्रपट्टियाँ बाजूबंद की तरह भुजा पर बांधी जाती थीं। मुद्राओं पर अंकित अभिलेख हर मामले में अलग-अलग किस्म के होते थे, मगर इन ताम्रपट्टियों पर अंकित अभिलेख उन पशुओं से ही संबद्ध थे, जो उन पर चित्रित किए गए थे।

मृद्भांड

- इन पुरास्थलों से बड़ी संख्या में प्राप्त मृद्भांडों (मिट्टी के बर्तनों) की शक्ल सूरत तथा उन्हें बनाने की शैलियों से हमें तत्कालीन डिज़ाइनों के भिन्न-भिन्न रूपों तथा विषयों के विकास का पता चलता है। सिंधु घाटी में पाए गए मिट्टी के बर्तन अधिकतर कुम्हार की चाक पर बनाए गए बर्तन हैं, हाथ से बनाए गए बर्तन नहीं।
- इनमें रंग किए हुए बर्तन कम और सादे बर्तन अधिक हैं। ये सादे बर्तन आमतौर पर लाल चिकनी मिट्टी के बने हैं। इनमें से कुछ पर सुंदर लाल या स्लेटी लेप लगी है। कुछ घुंडीदार पात्र हैं, जो घुंडियों की पंक्तियों से सजे हैं। काले रंगीन बर्तनों पर लाल लेप की एक सुंदर परत है, जिस पर चमकीले काले रंग से ज्यामितीय आकृतियाँ और पशुओं के डिज़ाइन बने हैं।

- बहुरंगी मृद्भांड बहुत कम पाए गए हैं। इनमें मुख्यत: छोटे-छोटे कलश शामिल हैं जिन पर लाल, काले, हरे और कभी-कभार सफ़ेद तथा पीले रंगों में ज्यामितीय आकृतियाँ बनी हुई हैं। उत्कीर्णित बर्तन भी बहुत कम पाए गए हैं; और जो पाए। गए हैं, उनमें उत्कीर्णन की सजावट पेंदे पर और बलि-स्तंभ की तश्तरियों तक ही सीमित थी। छिद्रित पात्रों में एक बड़ा छिद्र बर्तन के तल पर और छोटे छेद उनकी दीवार पर सर्वत्र पाए गए हैं। ऐसे बर्तन शायद पेय पदार्थों को छानने के काम में लाए जाते थे।

- घरेलू कामकाज में प्रयोग किए जाने वाले मिट्टी के बर्तन अनेक रूपों तथा आकारों में पाए गए हैं। सीधे और कोणीय रूपों वाले बर्तन अपवाद के तौर पर भले ही मिले हों, पर लगभग सभी बर्तनों में सुंदर मोड़ पाए गए हैं। छोटे-छोटे पात्र, जो अधिकतर आधे इंच से भी कम ऊंचाई वाले हैं, खासतौर पर इतने अधिक सुंदर बने हुए हैं कि कोई भी दर्शक उनकी प्रशंसा किए बिना नहीं रहता।

आभूषण

हड़प्पा के पुरुष और स्त्रियां अपने आपको तरह-तरह के आभूषणों से सजाते थे। ये गहने बहुमूल्य धातुओं और रत्नों से लेकर हड्डी और पकी हुई मिट्टी तक के बने होते थे।

गले के हार, फीते, बाजूबंद और अंगूठियाँ आमतौर पर पुरुषों और स्त्रियों दोनों के द्वारा समान रूप से पहनी जाती थीं, पर करधनियाँ, बुंदे (कर्णफूल) और पैरों के कड़े या पैंजनियाँ स्त्रियाँ ही पहना करती थीं। मोहनजोदड़ो और लोथल से ढेरों गहने मिले हैं, जिनमें सोने और मूल्यवान नगों के हार, तांबे के कड़े और मनके, सोने के कुंडल, बुंदे/झुमके और शीर्ष 3 -आभूषण, लटकनें तथा बटने और सेलखड़ी के मनके तथा बहुमूल्य रत्न शामिल हैं। सभी आभूषणों को सुंदर ढंग से बनाया गया है। यह ध्यान देने वाली बात है कि हरियाणा के फरमाना पुरास्थल पर एक कब्रिस्तान (शवाधान) पाया गया है, जहाँ शवों को गहनों के साथ दफनाया गया है।

चन्हुदड़ो और लोथल में पाई गई कार्यशालाओं से पता चलता है कि मनके बनाने का उद्योग काफी अधिक विकसित था। मनके कार्नीलियन, जमुनिया, सूर्यकांत, स्फटिक, कांचमणि, सेलखड़ी, फीरोज़ा, लाजवर्द मणि आदि के बने होते थे। इसके अलावा तांबा, कांसा और सोने जैसी धातुएँ और शंख-सीपियां और पकी मिट्टी भी मनके बनाने के काम में आती थीं। मनके तरह-तरह के रूप और आकार के होते थे—कोई तश्तरीनुमा बेलनाकार, गोल या ढोलकाकार होता था तो कोई कई खंडों में विभाजित कुछ मनके दो या अधिक पत्थरों के जोड़ से बने होते थे, कुछ पत्थर पर सोने का आवरण चढ़ा होता था, कुछ को काटकर या रंगकर सुंदर बनाया जाता था तो कुछ में तरह-तरह के नमूने खुदे होते थे। मनकों के निर्माण में अत्यधिक तकनीकी कुशलता का प्रयोग दर्शाया गया है।

हड़प्पा के लोग पशुओं, विशेष रूप से बंदरों और गिलहरियों के नमूने बनाते थे, जो एकदम असली जैसे दिखाई देते थे। इनका उपयोग पिन की नोक और मनकों के रूप में किया जाता था।

सिंधु घाटी के घरों में बड़ी संख्या में तकुए और तकुआ चक्रिया भी मिली हैं, जिससे पता चलता है कि उन दिनों कपास और ऊन की कताई बहुत प्रचलित थी। गरीब और अमीर दोनों तरह के लोगों में कताई का आम रिवाज था। यह तथ्य इस बात से उजागर होता है कि तकुए की चक्रियां मिट्टी तथा सीपियों की बनी हुई पाई गई हैं। पुरुष स्त्रियाँ, धोती

और शॉल जैसे दो अलग-अलग कपड़े पहनते थे। शॉल दाएं कंधे के नीचे से ले जाकर बाएं कंधे के ऊपर ओढ़ी जाती थी।

पुरातत्वीय खोजों में मिली चीजों से यह प्रतीत होता है कि सिंधु घाटी के लोग साज-सिंगार और फ़ैशन के प्रति काफ़ी जागरूक थे। उनमें केश-सज्जा की भिन्न-भिन्न शैलियां प्रचलित थीं। पुरुष दाढ़ी-मूँछ रखते थे। स्त्रियों सुंदर दिखने के लिए सिंदूर, काजल, लाली का प्रयोग करती थीं और चेहरे पर लेप लगाती थीं। धौलावीरा में पत्थरों के ढाँचों के अनेक अवशेष मिले हैं जिनसे यह प्रकट होता है कि सिंधु घाटी के लोग अपने घर आदि के निर्माण में पत्थर का प्रयोग करते थे।

सिंधु घाटी के कलाकार एवं शिल्पकार अनेकों शिल्पों में अत्यधिक पारंगत थे जिनमें धातु का ढलाव, पत्थरों पर नक्काशी, मिट्टी के बर्तन बनाना और उन्हें रंगना एवं जानवरों, पौधों और पक्षियों के साधारण रूप को लेकर टेराकोटा का निर्माण मुख्य है।

बुद्ध कालीन कला -

- *बुद्ध जब वृद्ध हो चुके थे तो उनके प्रिय शिष्य आनन्द, जो कि हमेशा बुद्ध के पास ही रहते थे उन्होंने बुद्ध से एक प्रश्न पूछा,'' -''उन्होंने कहा हे तथागत आपकी मृत्यु के बाद आपके अवशेषों का हम क्या करेंगे''?*
- *बुद्ध पहले तो शान्त रहे और फिर मुस्कुराये अपने शरीर का त्याग कर दिया। और महापरिनिर्वाण को प्राप्त किया।*
- *बुद्ध के शरीर को पहले तो दहन किया गया और फिर जो अवशेष बचे उनको लेकर कई राजाओं में विवाद शुरू हो गया।*
- *चूँकि हर राजा अवशेषों को अपने राज्य में ले जाना चाहता था और कोई भी समझौते के लिये तैयार नही था इसलिये हालात युद्ध जैसे बन गये।*
- *बुद्ध की मृत्यु कुशीनगर में हुई थी जो कि मल्लाओं की राजधानी थी। इस विवाद का निपटारा एक द्रोण नामक ब्राह्मण ने किया और उसने सुझाया के बुद्ध के अवशेषों को*

आपास में बाँट लिया जाये। और फिर कुशीनगर में ही बुद्ध के अवशेषों को मल्ल और सात अन्य राजाओं के बीच बाँट लिया गया।

- इन अवशेषों को भारत के अलग-2 स्थानों में ले जाकर धरती में गाड़ दिया गया और उनके ऊपर एक विशेष प्रकार की आकृति का निर्माण करवाया गया जिसे स्तूप नाम दिया गया।
- स्तूप संस्कृत भाषा का एक शब्द है जिसका अर्थ होता है। "ढेर"
- बौद्ध धर्म में आज अगर किसी प्रतीक चिन्ह् का सबसे ज्यादा महत्व है तो वह स्तूप है।
- स्तूप बौद्ध धर्म के अनुयायियों के लिये आस्था का वह प्रतीक है जिसे वह सीधे तौर पर बुद्ध के बाद स्थान देते हैं।
- उनका मानना है कि आज भी बुद्ध स्तूप में निवास करते हैं और उन्हे मुक्ति का मार्ग दिखाते हैं।
- इन स्तूपों में सबसे प्रमुख और प्रसिद्ध साँची, सारनाथ, अमरावती और मस्त के स्तूप है।
- कुछ समय बाद बुद्ध ने यह उत्तर दिया कि मेरे शरीर के अवशेषों पर एक संरचना का निर्माण करवाना जिसे मेरी मृत्यु के बाद एक प्रतीक के रूप में देखा जाए।
- लगभग 80 वर्ष की आयु में बुद्ध ने अपने शरीर का त्याग कर दिया।
- अशोक ने बुद्ध धर्म का प्रचार प्रसार सबसे ज्यादा कराया, उन्होंने गौतम बुद्ध के अवशेषों को सुदूर क्षेत्रें में भी पहुँचाया, जहाँ कुछ और बौद्ध स्तूप बनाये गये।
- ये स्तूप आज सिर्फ भारत ही नहीं बल्कि कई अन्य देशों में भी पाये जाते हैं। फिर चाहे वह तक्षशिला का धर्मराजिका स्तूप हो या या श्रीलंका का जेतवानारम्या स्तूप या फिर इंडोनेशिया में स्थित बोरबदूर इन सभी स्तूपों का अपना अपना महत्व है।
- बौद्ध भिक्षु इन स्तूपों को बुद्ध का प्रतीक मानकर न सिर्फ इनकी परिक्रमा करते हैं बल्कि यहाँ बैठकर ध्यान भी केन्द्रित करते हैं।
- यह स्तूप दूर से देखने पर एक अण्डाकार आकृति या अर्धगोलाकार आकृति में दिखते हैं और इन्हें कई चरणों में बाँटा जाता है जिनके अलग-2 नाम होते हैं।
- अगर मध्य प्रदेश में स्थित साँची के स्तूप की बाल की जाए तो इसे भी कई भागों में बाँटा गया है।

FREE SAMPLE

- मुख्य भाग जिसके नीचे अवशेषों को दबाया गया है उसे अण्ड कहते हैं यह अण्डे की आकृति का एक Solid Structure होता है।
- अण्ड के ठीक ऊपर एक चौंकोर संरचना बनाई जाती है जिसे हर्मिका कहा जाता है।
- हर्मिका के ऊपर यष्ठी का निर्माण किया जाता है और यह मान्यता है कि यष्ठी में भगवान बुद्ध विराजमान होते हैं जिनके ऊपर छत्र का निर्माण किया जाता है।
- बाह्य दुनिया से अलग करने के लिये स्तूप को एक boundary wall के द्वारा बंद कर दिया जाता है जिसे वेदिका कहा जाता है। जिसमें प्रवेश के लिये कुछ दरवाजे भी बनाये जाते हैं। इन दरवाजों को तोरण द्वार कहा जाता है।
- अगर सांची के स्तूप को देखें तो इसके तोरण द्वारों में सुन्दर नक्काशी का प्रयोग भी किया गया है।
- सांची को UNESO ने 1989 में World Heritage Site में भी शामिल किया है।
- वैसे तो सांची में कई सारे स्तूप है पर उनमें सबसे प्रमुख है ग्रेट स्तूप जो कि सबसे प्राचीन माना जाता है।
- साँची का स्तूप जो कि पूरी तरह से क्षतिग्रस्त हो चुका था उसको अंग्रेजी शासनकाल में Archaeological Survey of India की मदद से फिर से सुधारा गया, और आज यह पर्यटन का एक प्रमुख केन्द्र है।
- बौद्ध धर्म आज दुनिया में सबसे तेजी से बढ़ने वाले धर्मों में से एक है ऐसे में इन स्तूपों की महत्वता अपने आप बढ़ जाती है।

मंदिर वास्तुकला-

- मंदिर निर्माण की प्रक्रिया का आरंभ तो मौर्य काल से ही शुरू हो गया था किंतु आगे चलकर उसमें सुधार हुआ और गुप्त काल को मंदिरों की विशेषताओं से लैस देखा जाता है।
- संरचनात्मक मंदिरों के अलावा एक अन्य प्रकार के मंदिर थे जो चट्टानों को काटकर बनाए गए थे। इनमें प्रमुख है महाबलिपुरम का रथ-मंडप जो 5वीं शताब्दी का है।

FREE SAMPLE

- गुप्तकालीन मंदिर आकार में बेहद छोटे हैं- एक वर्गाकार चबूतरा (ईंट का) है जिस पर चढ़ने के लिये सीढ़ी है तथा बीच में चौकोर कोठरी है जो गर्भगृह का काम करती है।
- कोठरी की छत भी सपाट है व अलग से कोई प्रदक्षिणा पथ भी नहीं है।
- इस प्रारंभिक दौर के निम्नलिखित मंदिर हैं जो कि भारत के प्राचीनतम संरचनात्मक मंदिर हैं: तिगवा का विष्णु मंदिर (जबलपुर, मा.प्र.), भूमरा का शिव मंदिर (सतना, मा.प्र.), नचना कुठार का पार्वती मंदिर (पन्ना, मा.प्र.), देवगढ़ का दशावतार मंदिर (ललितपुर, यू.पी.), भीतरगाँव का मंदिर (कानपुर, यू.पी.) आदि।
- मंदिर स्थापत्य संबंधी अन्य नाम, जैसे- पंचायतन, भूमि, विमान भद्ररथ, कर्णरथ और प्रतिरथ आदि भी प्राचीन ग्रंथों में मिलते हैं।
- छठी शताब्दी ईस्वी तक उत्तर और दक्षिण भारत में मंदिर वास्तुकला शैली लगभग एकसमान थी, लेकिन छठी शताब्दी ई. के बाद प्रत्येक क्षेत्र का भिन्न-भिन्न दिशाओं में विकास हुआ।
- आगे ब्राह्मण हिन्दू धर्म के मंदिरों के निर्माण में तीन प्रकार की शैलियों नागर, द्रविड़ और बेसर शैली का प्रयोग किया गया।

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

मंदिर स्थापत्य

नागर	द्रविड़	बेसर
पाल उपशैली	पल्लव उपशैली	राष्ट्रकूट
ओडिशा उपशैली	चोल उपशैली	चालुक्य
खजुराहो उपशैली	पाण्डय उपशैली	काकतीय
सोलंकी उपशैली	विजयनगर उपशैली	होयसल
	नायक उपशैली	

क्रम	मंदिर	स्थल	कालखंड
1।	गोलाकार ईंट व इमारती लकड़ी का मंदिर	बैराट ज़िला राजस्थान	तृतीय शताब्दी ईसा पूर्व
2।	साँची का मंदिर- 40	साँची (मध्य प्रदेश)	तृतीय शताब्दी ईसा पूर्व
3।	साँची का मंदिर-18	साँची (मध्य प्रदेश)	द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व
4।	प्राचीनतम संरचनात्मक मंदिर	ऐहोल (कर्नाटक)	चौथी शताब्दी ईसा पूर्व
5।	साँची का मंदिर-17	साँची (मध्य प्रदेश)	चौथी सदी
6।	लड़खन मंदिर	ऐहोल (कर्नाटक)	पाँचवीं सदी ईस्वी सन्
7।	दुर्गा मंदिर	ऐहोल (कर्नाटक)	550 ईस्वी सन्

भारतीय मंदिरों के स्थापत्य की नागर, द्रविड़ और वेसर शैलियाँ -

पूर्व मध्यकालीन शिल्पशास्त्रों में मंदिर स्थापत्य की तीन बड़ी शैलियाँ बताई गई हैं –
नागर शैली, द्रविड़ शैली और वेसर

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

नोट – प्रिय पाठकों , **यह एक sample मात्र है** यह अध्याय अभी यहीं समाप्त नही हुआ है, इसमें अभी और भी कंटेंट पढ़ना बाकी है जो आपको **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स में पढ़ने को मिलेगा / यह तो एक sample मात्र ही है/ **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स खरीदने के लिए हमारे संपर्क नंबर पर कॉल करें , धन्यवाद/

संपर्क करें – 8233195718, 9694804063, 8504091672

हमारे नोट्स के अन्य परीक्षाओं में रिजल्ट (Result)-

RAS Pre. परीक्षा 2021 में हमारे नोट्स में से 73/74 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 79 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबरकी दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 103 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 96 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 91 प्रश्न आये

राजस्थान SI 2021 की परीक्षा कि परीक्षा में भी कई प्रश्न आये हैं -

Proof देखने के लिए हमारे youtube चैनल (InfusionNotes) पर इसकी वीडियो देखें या हमारे नंबरों पर कॉल करें /

FREE SAMPLE

अध्याय – 2

- **प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत के धार्मिक आन्दोलन और धर्म दर्शन**

धार्मिक आन्दोलन

- **बौद्ध धर्म**

उदय के कारण

- छठी ई.पू. में वैदिक संस्कृति कर्मकाण्डों व आडम्बरों से ग्रसित हो गई।
- मध्य गंगा घाटी में इसी समय 62 सम्प्रदायों का उदय हुआ । उनमें जैन और बौद्ध सम्प्रदाय प्रमुख थी ।

बौद्ध धर्म

- बौद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध थे ।
  सिद्धार्थ-बचपन का नाम - सिद्धि प्राप्त करने के लिए जन्म लेने वाला ।
- जन्म 563 ई.पू. –कपिलवस्तु के लुम्बिनी नामक स्थान पर हुआ था । (नेपाल)
- कुल- शाक्य (क्षत्रिय कुल)
- बुद्ध की माता – महामाया थी । उनकि मृत्यु के बाद पालन पोषण महाप्रजापति गौतमी ने किया

FREE SAMPLE

था।

- पिता – शुद्धोधन शाक्य गण के मुखिया थे।
- 16 वर्ष की आयु में गौतम बुद्ध का विवाह-
  यशोधरा से हुआ इनके पुत्र का नाम राहुल था।

महाभिनिष्क्रमण

- 29 वर्ष की आयु में सांसारिक समस्याओं से व्यथित होकर गृहस्थ जीवन का त्याग कर दिया था।
- अनोमा नदी के तट पर सिर मुण्डन
- काषाय वस्त्र धारण किये।
- प्रथम गुरु आलार कलाम थे।
- सांख्य दर्शन के आचार्य
- बाद में उरुवेला (बोधगया) प्रस्थान
- यहाँ पांच साधक मिले।
- इनमें कौण्डिय प्रमुख थे ।

ज्ञान प्राप्ति –

- 35 वर्ष की आयु में – बोध गया में ज्ञान की प्राप्ति हुई।
- वैशाख पूर्णिमा को पीपल के वृक्ष के नीचे
  निरंजना नदी (पुनपुन) के तट पर ज्ञान की प्राप्ति हुई।
- इसी दिन से गौतम बुद्ध तथागत कहलाये तथा गौतम बुद्ध नाम भी यहीं से हुआ। वह स्थान बोधगया कहलाया। जिसने सत्य को प्राप्त कर लिया।

धर्मचक्र प्रवर्तन-

- बुद्ध ने प्रथम उपदेश सारनाथ (ऋषिपतनम) में दिया जिसे बौद्धग्रंथों में धर्मचक्रप्रवर्तन कहलाया।

FREE SAMPLE

- बोधगया से सारनाथ आये
- प्रथम उपदेश दिया-5 ब्राहमण सन्यासियों को
  मागधी भाषा में।
- गौतम बुद्ध का बौद्ध संघ में प्रवेश हुआ।
- सर्वप्रथम अनुयायी – तपस्स जाट शुद्र कालिक
- प्रिय शिष्य- आनन्द
  बौद्ध धर्म की प्रथम महिला भिक्षुणी - गौतमी (बुद्ध की मौसी)

अन्तिम उपदेश

- कुशीनारा में सुभच्छ को दिया
- हिरण्यवती नदी तट पर

महापरिनिर्वाण (मृत्यु)

- कुशीनारा में 483 ई.पू.
- 80 वर्ष की आयु में
- बुद्ध के अवशेष 8 भागों में डाले गये जहाँ स्तूप बनाये गये।

वैशाख पूर्णिमा का महत्व

- वैशाख पूर्णिमा को बुद्ध पूर्णिमा भी कहते हैं।
- गौतम बुद्ध का जन्म, ज्ञान प्राप्ति
- महापरिनिर्वाण - वैशाख पूर्णिमा को
  अपवाद - महाभिनिष्क्रमण
- गौतम बुद्ध में 32 महापुरुषों के लक्षण बताये गये हैं।

बुद्ध के प्रमुख वचन

- जीवन कष्टों से भरा है।

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

- लिप्सा तृष्णा का ही दूसरा रूप है।

बौद्ध धर्म के त्रिरत्न

- बुद्ध , धम्म , संघ

बुद्ध के चार आर्य सत्य

1. दुःख
2. दुःख समुदाय
3. दुःख निरोध (निवारण)
4. प्रतिपदा

- इन्ही का कालान्तर में विस्तार होकर ये अष्टांगिक मार्ग कहलाये।

अष्टांगिक मार्ग

1. सम्यक दृष्टि
2. सम्यक संकल्प
3. सम्यक वाणी
4. सम्यक कर्मान्त
5. सम्यक आजीव
6. सम्यक व्यायाम
7. सम्यक स्मृति
8. सम्यक समाधि

- समाधि मनुष्य के जीवन का परम लक्ष्य निर्वाण प्राप्ति ।
- जीवन-मरण चक्र से मुक्ति
- **बुद्ध धर्म**
- अनीश्वरवादी
- पुनर्जन्म में विश्वास
- अनात्मवादी धर्म

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

बौद्ध धर्म के प्रतीक

जन्म - कमल व साण्ड

गृहत्याग - घोड़ा

ज्ञान - पीपल (बोधि वृक्ष)

निर्वाण - पद-चिह्न

मृत्यु - स्तूप

- बौद्ध धर्म का सर्वाधिक विस्तार कोशल राज्य में हुआ था ।
- बौद्ध धर्म के सर्वाधिक उपदेश श्रावस्ती में दिये गये ।
- बौद्ध धर्म के प्रचार केन्द्र - मगध

बौद्ध संगीतियां

1. प्रथम बौद्ध संगीति 483 ई.पू. संरक्षक - अजातशत्रु था । राजगृह में रचना रची गयी ।
   इसका अध्यक्ष महाकश्यप था सुत्तपिटक विनयपिटक
   (बुद्ध के उपदेश) (संघ के नियम)

2. द्वितीय बौद्ध संगीति 383 ई.पू. वैशाली में हुई थी संरक्षक - कालाशोक
   अध्यक्ष – सबाकामी था
   वैशाली में भिक्षुओं में मतभेद हो .....

- **जैन धर्म**

- जैन शब्द का निर्माण जिन से हुआ है जिसका अर्थ होता हैं – विजेता
- संस्थापक – ऋषभदेव प्रथम तीर्थंकर

FREE SAMPLE

कुल 24 तीर्थकर हुए

- 23वें- तीर्थकर पार्श्वनाथ थे जो काशी के इक्ष्वाकु वंशीय राजा अश्वसेन के पुत्र थे।
- जैन धर्म को व्यवस्थित रूप दिया।

24वें-तीर्थकर वर्धमान महावीर थे।

- जैन धर्म के वास्तविक संस्थापक महावीर स्वामी।
- जन्म कुण्डग्राम (वैशाली)में हुआ था।
- महावीर के बचपन का नाम वर्धमान था।
- पिता – सिद्धार्थ ज्ञात्रक कुल के सरदार थे।
- माता – त्रिशला लिच्छवि राजा चेटक की बहन थी।
- महावीर की पत्नी का नाम यशोदा एवं पुत्री का नाम अनोज्जा प्रियदर्शनी था।
- गृहत्याग 30 वर्ष की आयु में
- 12 वर्षो की कठिन तपस्या के बाद महावीर को ज्राम्भिक के समीप ऋजुपालिका नदी के तट पर साल वृक्ष के निचे तपस्या करते हुए सम्पूर्ण ज्ञान का बोध हुआ
- ज्ञान प्राप्ति 42 वर्ष की आयु में
- उपदेश- अर्द्ध-मागधी भाषा में दिया।
- प्रथम उपदेश राजगृह में दिया था।
- प्रथम शिष्य - जमालि थे।
- शिष्या - चन्दना थी।
- मृत्यु पावापुरी बिहार में।
- महावीर जी शिक्षा प्राकृत भाषा में देते थे।

जैन धर्म के पंच महाव्रत

1. सत्य वचन
2. अस्तेय (चोरी मत करो)
3. अंहिसा
4. अपरिग्रह (धन संचय मत करो)

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

5. ब्रह्मचर्य

त्रिरत्न (मोक्ष प्राप्ति के साधन)

- सम्यक ज्ञान
- सम्य दर्शन
- सम्यक चरित्र
- जैनधर्म में पुनर्जन्म में विश्वास तथा कर्मवाद में विश्वास पर बल

संघ

- महावीर ने एक संघ की स्थापना की ।
- इस संघ के 11 अनुयायी बने जो गणधर कहलाये।
- 11 में से 10 महावीर की मृत्यु होने से पहले मोक्ष प्राप्त कर चुके थे।

एक ही जीवित था - सुधर्मण

जैन संगीतियां (सभायें)

प्रथम- 300 ई.पू.

- पाटलिपुत्र में
- चन्द्रगुप्त मौर्य (संरक्षक)
- अध्यक्ष स्थूलभद्र
- जैन धर्म दो भागों में विभाजित
- श्वेताम्बर - सफेद कपड़े वाले
- दिगम्बर - नग्न रहने वाले

द्वितीय - 512 ई.पू. /513/526 ई.पू.

- वल्लभी (गुजरात) में
- क्षमाश्रवण (अध्यक्ष)
- जैन ग्रन्थों का अन्तिम रूप से संकलन

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

- जैन धर्म का सबसे बड़ा केन्द्र चम्पानगरी
- चन्द्रगुप्त मौर्य ने कर्नाटक में जैन धर्म का विस्तार किया।
- चन्दना

  प्रथम जैन महिला भिक्षुणी
- हाथी गुम्फा अभिलेख (खारवेल)प्रारम्भिक जैन अवशेष
- महावीर के अनुयायियों को मूलतः निग्रंथ कहा जाता था ।
- दो जैन तीर्थंकरों ऋषभदेव एवं अरिष्टनेमी के नामों का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है । अरिष्टनेमी को भगवान कृष्ण का निकट संबंधी माना जाता .....

- **शैव धर्म** –

- भगवान शिव की पूजा करने वालों को शैव से सबंधित धर्म को शैव धर्म कहा गया है । शिवलिंग उपसना का प्रारम्भिक पुरातात्विक साक्ष्य हड़प्पा संस्कृति के अवशेषो से मिलता है ।
- ऋग्वेद में शिव के लिए रूद्र नामक देवता का उल्लेख मिलता है ।
- लिंगपूजा का पहला स्पष्ट वर्णन मत्स्यपुराण में मिलता है ।
- अथर्ववेद में शिव को भवशर्व पशुपति तथा भूपति कहा गया ।
- एलोरा के प्रसिद्ध कैलाश मन्दिर का निर्माण राष्ट्रकुटों ने किया ।
- चौल शासक राजेंद्र ने बृहदेस्वर शैव मन्दिर का निर्माण करवाया था ।
- शैवों का सर्वाधिक प्राचीन सम्प्रदाय पाशुपत सम्प्रदाय है । पाशुपत सम्प्रदाय का विवरण महाभारत में मिलता है । इसके संस्थापक नकुलीश या लकुलीश थे । इसके अनुयायिओं को पंचाभिक कहा जाता था ।

FREE SAMPLE

- श्वेताश्वतर एवं अथर्वशिरस उपनिशद में भगवान रूद्र की महानता का उल्लेख मिलता है ।
- वामन पुराण में शैव सम्प्रदाय की संख्या चार बतायी गयी है। (1) पाशुपत (2) कापालिक (3) कालमुख (4) लिंगायत ।
- कापालिक सम्प्रदाय के ईष्टदेव भैरव थे । इस सम्प्रदाय का प्रमुख केन्द्र श्री शैल नामक स्थान था ।
- कुषाण शासकों की मुद्राओं पर शिव एवं नन्दी का एक .....

शंकराचार्य -

प्राचीन भारतीय सनातन परंपरा के विकास और धर्म के प्रचार-प्रसार में आदि शंकराचार्य का महान योगदान है उन्होंने सनातन परंपरा को पूरे देश में फैलाने के लिए भारत के चारों कोनों में मठों की स्थापना की थी

आदि शंकराचार्य अद्वैत वेदांत के प्रणेता, संस्कृत के विद्वान, उपनिषद व्याख्याता और सनातन धर्म सुधारक थे धार्मिक मान्यता में इन्हें भगवान शंकर का अवतार भी माना गया. इन्होंने लगभग पूरे भारत की यात्रा की और इनके जीवन का अधिकांश भाग देश के उत्तरी हिस्से में बीता

प्राचीन भारतीय सनातन परंपरा के विकास और धर्म के प्रचार-प्रसार में आदि शंकराचार्य का महान योगदान है इसके लिए उन्होंने भारत के चारों कोनों में मठों की स्थापना की थी ये ईसा से पूर्व आठवीं शताब्दी में स्थापित बताए जाते हैं. शंकराचार्य द्वारा स्थापित मठ आज भी शंकराचार्यों के नेतृत्व में सनातन परंपरा के प्रचार-प्रसार का कार्य करते हैं आदि शंकराचार्य को अद्वैत परंपरा का प्रवर्तक माना जाता है शंकराचार्य को भारत के ही नहीं बल्कि दुनिया के उच्चतम दार्शनिकों में शुमार किया गया है उनके अद्वैत दर्शन को दर्शनों का दर्शन माना गया है. भारतीय धर्म दर्शन में तो उसे श्रेष्ठ माना ही गया है. उन्होंने

अनेक ग्रन्थ लिखे children age हैं लेकिन उनका दर्शन विशेष रूप से उनके तीन भाष्यों में जो उपनिषद, ब्रह्मसूत्र और गीता पर हैं. प्रमुख है गीता और ब्रह्मसूत्र पर अन्य आचार्यों के भी भाष्य हैं लेकिन उपनिषदों पर समन्वयात्मक भाष्य जैसा शंकराचार्य का है, वैसा अन्य किसी का नहीं है।

प्रचलित मान्यता के मुताबिक आदि शंकराचार्य को आदर्श संन्यासी के तौर पर जाना जाता है उनका जन्म केरल के कालडी ग्राम में हुआ था. केवल 32 साल के जीवनकाल में उन्होंने कई उपलब्धियां अर्जित की मात्र 8 साल की उम्र में वह मोक्ष की प्राप्ति के लिए घर छोड़कर गुरु की खोज में निकल पड़े थे

भारत के दक्षिणी राज्य से नर्मदी नदी के किनार पहुंचने के लिए युवा शंकर ने 2000 किलोमीटर तक की यात्रा की वहां गुरु गोविंदपद से शिक्षा ली और करीब 5 सालों तक अपने गुरु की सेवा की इस दौरान शंकर ने वैदिक ग्रन्थों को आत्मसात कर लिया था. शंकराचार्य केरल से कश्मीर पुरी (ओडिशा) से द्वारका (गुजरात), श्रृंगेरी (कर्नाटक) से बद्रीनाथ (उत्तराखंड) और कांची (तमिलनाडु) से काशी (उत्तरप्रदेश) तक घूमे हिमालय की तराई से नर्मदा गंगा के तटों तक और पूर्व से लेकर पश्चिम के घाटों तक उन्होंने यात्राएं की शंकराचार्य ने अपने दर्शन, काव्य और तीर्थयात्राओं से उसे एक सूत्र में पिरोने का प्रयास किया

सनातन धर्म के मूल स्वरूप को जीवित किया-

आदि शंकराचार्य के समय में अंधविश्वास और तमाम तरह के कर्मकांडों का बोलबाला हो गया था. सनातन धर्म का मूल रूप पूरी तरह से नष्ट हो चुका था और यह कर्मकांड की आंधी में पूरी तरह से लुप्त हो चुका था. शंकराचार्य ने कई प्रसिद्ध विद्वानों को चुनौती दी. दूसरे धर्म और संप्रदाय के लोगों को भी शास्त्रार्थ करने के लिए आमंत्रित किया. शंकराचार्य ने बड़े-बड़े विद्वानों को अपने शास्त्रार्थ से पराजित कर दिया और उसके बाद सबने शंकराचार्य को अपना गुरु मान लिया.

शंकर के समय में असंख्य संप्रदाय अपने-अपने संकीर्ण दर्शन के साथ-साथ अस्तित्व में थे. लोगों के भ्रम को दूर करने के लिए शंकराचार्य ने 6 संप्रदाय वाली व्यवस्था की

शुरुआत की जिसमें विष्णु, शिव, शक्ति, मुरुक और सूर्य प्रमुख देवता माने गए. उन्होंने देश के प्रमुख मंदिरों के लिए नए नियम भी बनाए.

शंकराचार्य का अद्वैत दर्शन-

उनके द्वारा स्थापित 'अद्वैत वेदांत सम्प्रदाय' 9वीं शताब्दी में काफ़ी लोकप्रिय हुआ. उन्होंने प्राचीन भारतीय उपनिषदों के सिद्धान्तों को पुनर्जीवन प्रदान करने का प्रयत्न किया. उन्होंने ईश्वर को पूर्ण वास्तविकता के रूप में स्वीकार किया और साथ ही इस संसार को भ्रम या माया बताया. उनके अनुसार अज्ञानी लोग ही ईश्वर को वास्तविक न मानकर संसार को वास्तविक मानते हैं. ज्ञानी लोगों का मुख्य उद्देश्य अपने आप को भम्र व माया से मुक्त करना एवं ईश्वर व ब्रह्म से तादाम्य स्थापित करना होना चाहिए. शंकराचार्य ने वर्ण पर आधारित ब्राह्मण प्रधान सामाजिक व्यवस्था का समर्थन किया. शंकराचार्य ने संन्यासी समुदाय में सुधार के लिए उपमहाद्वीप में चारों दिशाओं में चार मठों की स्थापना की.
बौद्धिक क्षमता के अतिरिक्त शंकराचार्य उच्च कोटि के कवि भी थे. उन्होंने 72 भक्तिमय और ध्यान करने वाले गाने व मंत्र लिखे. ब्रह्म सूत्र, भगवदगीता और 12 मुख्य उपनिषदों पर शंकराचार्य ने टीकाएं भी लिखीं. अद्वैत वेदांत दर्शन पर भी उन्होंने 23 किताबें लिखीं. भगवान शिव का अवतार माने जाने वाले शंकराचार्य केवल 32 साल तक ही जीवित रहे. उनके बारे में कई प्रेरणादायक कहानियां प्रचलित हैं.

मठों की स्थापना-

भारत भ्रमण के दौरान शंकराचार्य ने संन्यासियों के विभिन्न समूहों को एक सूत्र से जोड़ने के लिए चार मठों की स्थापना की. भारत के चार अलग-अलग कोनों में चार मठों की स्थापना की. उन्होंने चारों मठों में अपने सबसे अनुभवी शिष्यों की नियुक्ति की. ऐतिहासिक और साहित्यिक साक्ष्य के मुताबिक, कांची कामकोटि मठ की स्थापना भी आदिगुरु शंकराचार्य ने की थी.....

रामानन्द

रामानन्दी सम्प्रदाय (बैरागी सम्प्रदाय) के प्रवर्तक **रामानन्दाचार्य** का जन्म सम्वत् 1236 में हुआ था। जन्म के समय और स्थान के बारे में ठीक-ठीक जानकारी उपलब्ध नहीं है। शोधकर्ताओं ने जो जानकारी जुटाई है उसके अनुसार रामानन्द जी के पिता का नाम पुण्यसदन और माता का नाम सुशीला देवी था।

रामानंद संप्रदाय का विस्तार

जब समाज में चारों और आपसी कटुता और वैमनस्य का भाव भरा हुआ था

- उस समय में स्वामी रामानंद ने नारा दिया ""जात पात पूछे ना कोई हरि को भजे सो हरि का होई"" उन्होंने भक्ति का मार्ग सबके लिए खोल दिया
- उनके द्वारा स्थापित रामानंद संप्रदाय या रामावत संप्रदाय आज वैष्णव का सबसे बड़ा धार्मिक .....

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

नोट – प्रिय पाठकों , **यह एक sample मात्र है** यह अध्याय अभी यहीं समाप्त नही हुआ है, इसमें अभी और भी कंटेंट पढ़ना बाकी है जो आपको **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स में पढ़ने को मिलेगा / यह तो एक sample मात्र ही है/ **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स खरीदने के लिए हमारे संपर्क नंबर पर कॉल करें , धन्यवाद/

संपर्क करें – 8233195718, 9694804063, 8504091672

हमारे नोट्स के अन्य परीक्षाओं में रिजल्ट (Result)-

RAS Pre. परीक्षा 2021 में हमारे नोट्स में से 73/74 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 79 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबरकी दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 103 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 96 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 91 प्रश्न आये

राजस्थान SI 2021 की परीक्षा कि परीक्षा में भी कई प्रश्न आये हैं -

Proof देखने के लिए हमारे youtube चैनल (InfusionNotes) पर इसकी वीडियो देखें या हमारे नंबरों पर कॉल करें /

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

अध्याय – 6

- **स्वातंत्र्योत्तर सुदृढ़ीकरण और पुनर्गठन- देशी रियासतों का विलय तथा राज्यों का भाषायी आधार पर पुनर्गठन**

देशी रियासतों का एकीकरण (Integration of Princely States)

देसी रियासतों की संख्या कितनी थी, इस बात पर भी विवाद था, लेकिन इतनी तो पक्की बात है कि रियासतों की कुल संख्या 500 से अधिक थी तथा इनके आकार, हैसियत एवं रियासती संरचना भी अलग-अलग प्रकार की थी। जहाँ एक तरफ कश्मीर व हैदराबाद जैसी बड़ी देसी रियासतें थीं, जो किसी यूरोपियन देश के बराबर थीं तो वहीं दूसरी तरफ इतनी छोटी रियासतें भी थीं, जिनके तहत दर्जन अथवा दो दर्जन गाँव आते थे।

देसी रियासतें भारतीय इतिहास की लंबी राजनीतिक प्रक्रियाओं और ब्रिटिश नीतियों का परिणाम थीं। ये रजवाड़े अपनी ताकत और अपने स्वरूप के लिये पूरी तरह से अंग्रेजों पर निर्भर थे। भारत में कंपनी का शासन स्थापित होने के बाद देसी राज्यों को एक संधि करने पर मजबूर किया गया, जिसके तहत ब्रिटेन को 'सर्वोच्च शक्ति' के रूप में स्वीकार किया गया। इस संधि के माध्यम से ब्रिटिश राज्य ने मंत्रियों और उत्तराधिकारियों की नियुक्ति का अधिकार अपने हाथ में रखा था तथा उन्हें सैनिक सहायता उपलब्ध कराने का भी आश्वासन दे रखा था।

इन देसी रियासतों में काठियावाड़ और दक्षिण में स्थित कुछ जागीरों को छोड़कर किसी भी देसी रियासत के पास समुद्र तट नहीं था। आर्थिक तथा राजनीतिक कारणों से भी इन रियासतों की निर्भरता अंग्रेजों पर और ज्यादा थी, इसका कारण यह था कि इन रियासतों को कच्चे माल, औद्योगिक उत्पाद और रोजगार के अवसरों के लिये ब्रिटिश भारत पर निर्भर रहना पड़ता था। कई देसी रियासतों के पास अपनी रेल-लाइन, अपनी मुद्रा तथा

मुहर रखने की आज़ादी थी। इनमें से कुछ में आधुनिक उद्योग-धंधों का भी विकास हो चुका था तथा कुछ के पास आधुनिक शिक्षा की भी व्यवस्था थी। देश के लगभग 40% हिस्से में व्याप्त ये रियासतं अपने स्वरूप में नितांत ही अलोकतांत्रिक थीं। इनमें से अधिकांश में स्वतंत्र रहने की महत्त्वाकांक्षा थी, जिसे ब्रिटिश प्रधानमंत्री क्लीमेंट एटली के 20 फरवरी, 1947 की इस घोषणा से कि 'भारत की स्वतंत्रता' के साथ देसी रियासतें भी स्वतंत्र हो जाएंगी, प्रोत्साहन मिल रहा था। यही वजह है कि कुछ देसी रियासतों ने स्वतंत्र रहने का निर्णय भी कर लिया था, किंतु कई कारणों से ऐसा संभव न था। एक तो राष्ट्रीय आंदोलन का व्यापक प्रभाव वहाँ की जनता पर पड़ चुका था तथा रियासतों पर शेष भारत में विलय का भारी जनदबाव था तो दूसरे 'पटेल-मेनन की जोड़ी ने 'पुरस्कार एवं छड़ी' की नीति अपनाकर इस एकीकरण को पूरा किया।

त्रावणकोर (Travancore)-

दक्षिण भारत में स्थित त्रावणकोर पहली रियासत थी, जिसने विलय के नाम पर संघ से विपरीत रुख अपनाया। इस रियासत का सामरिक दृष्टिकोण से भी संघ के लिये महत्त्व था। इस रियासत में शिक्षित लोगों की संख्या ज्यादा थी तथा समुद्र तट के पास स्थित होने के कारण का कारोबार भी तरक्की पर था। इसके अतिरिक्त इस रियासत में सामरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण खनिज मोनोजाइट भी पाया जाता था, इससे थारियम निकलता था, जिसका इस्तेमाल परमाणु ऊर्जा व एटम बम बनाने में किया जा सकता था।

त्रावणकोर के दीवान सर सी.पी. रामास्वामी अय्यर थे, जो कि एक अति महत्त्वाकांक्षी तथा काबिल वकील थे। अय्यर त्रावणकोर के वास्तविक शासक थे। त्रावणकोर के महाराजा उनके हाथ की कठपुतली थे। अय्यर ने फरवरी 1946 में ही अपनी राय व्यक्त कर दी थी कि अंग्रेजों के भारत से जाने के बाद त्रावणकोर एक स्वतंत्र राज्य का दर्जा प्राप्त कर लेगा। त्रावणकोर की आजादी का एक मजेदार पहलू यह भी था कि लीग के नेताओं का भी समर्थन इन्हें प्राप्त था। जिन्ना ने 20 जन को त्रावणकोर के दीवान को इस आशय का संदेश भी प्रेषित किया कि पाकिस्तान एक स्वतंत्र त्रावणकोर के साथ संबंध बनाने को

तैयार हैं। इस संदर्भ में दीवान का भी यह मत था कि स्वतंत्र त्रावणकोर भारत और पाकिस्तान डोमिनियन की सरकारों के साथ संबंध बनाने को तैयार हैं।

त्रावणकोर की स्वतंत्रता का समर्थन लंदन में बैठे कुंछ महत्त्वाकांक्षी ब्रिटिश राजनीतिज्ञों द्वारा भी किया जा रहा था। उनका यह मानना था कि संभावित शीत युद्ध के दौरान आजाद त्रावणकोर थोरियम का मुख्य आपूर्तिकर्ता देश हो सकता हैं। इस संदर्भ में त्रावणकोर की सरकार ने पहले ही ब्रिटिश सरकार के साथ एक समझौता भी कर लिया था। इस संदर्भ में लंदन सरकार के मंत्री भी सतर्क थे कि अभी इस प्रकार का कोई वक्तव्य जारी न किया जाए, जिससे आजाद भारत की सरकार को त्रावणकोर पर अधिकार करने में आसानी हो जाए। त्रावणकोर के पास मोनोजाइट का समृद्ध भंडार हैं, अतः ब्रिटेन के दृष्टिकोण से यह लाभप्रद हैं कि कम-से-कम थोड़े समय के लिये त्रावणकोर राजनीतिक व आर्थिक रूप से स्वतंत्र रहे।

इधर पहले से तय कार्यक्रम के मुताबिक दीवान वायसराय से मिले तथा बातचीत के दौरान उन्होंने गांधीजी, नेहरू और कॉन्ग्रेस के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त किया। दीवान की सारी बातों को सुनकर वायसराय ने वी.पी. मेनन को उन्हें समझाने के लिये कहा। मेनन ने दीवान से आग्रह किया कि वे विलय-पत्र पर हस्ताक्षर कर दें, लेकिन फिर भी दीवान का अडियल रुख बरकरार रहा।

इसी बीच किसी संगीत समारोह में जाते वक्त सेना की वर्दी पहने हुए किसी अज्ञात व्यक्ति ने उन पर चाकुओं से हमला किया तथा उनके चेहरे और शरीर पर कई जगह चोट पहुँचाई। इस हमले का तत्कालीन परिणाम भारतीय दृष्टिकोण से काफी सकारात्मक रहा तथा वायसराय ने लंदन भेजे जाने वाली अपनी साप्ताहिक रिपोर्ट में लिखा कि स्टेट पीपल ऑर्गेनाइजेशन ने रियासत के खिलाफ आंदोलन छेड़ दिया तथा इस जन विद्रोह के तुरंत बादं त्रावणकोर ने आत्मसमर्पण कर दिया। घायल दीवान ने भी महाराजा त्रावणकोर को उदारवादी रवैया अपनाने का सुझाव दिया। इस प्रकार इसके आगे के घटनाक्रमों में 30 जुलाई को महाराजा ने संघ में विलय संबंधी अपना संदेश वायसराय को भेज दिया।

इस प्रकार जटिल घटनाक्रमों व प्रक्रिया - के तहत त्रावणकोर भारतीय संघ में शामिल हो गया।

भोपाल (Bhopal) –

एक दूसरी रियासत भोपाल थी, जो कि भारतीय संघ में शामिल होने से बचना चाहती थी। भोपाल भारत के मध्य भाग में स्थित है। वहाँ जनसंख्या का आधिक्य हिंदुओं का था, लेकिन वहां का शासक मुस्लिम था। यह एक प्रकार के विरोधाभास की स्थिति थी। भोपाल का नवाब महाराजाओं की परिषद का चांसलर था। वह राष्ट्रवादी कॉन्ग्रेस का धुर विरोधी तथा जिन्ना व लीग के काफी समीप था। अंग्रेजों के भारत से जाने के बाद वह राज्य के भविष्य को लेकर काफी चिंतित था।

वेवेल की जगह जब लॉर्ड माउंटबेटन वायसराय बनकर आया और उसने भोपाल के नवाब को अपनी रियासत का भारतीय संघ में विलय करने के लिये पत्र लिखा तो पत्र के जवाब में नवाब ने अपने स्वभाव के अनुकूल एक लंबा तथा भावना से परिपूर्ण पत्र लिखा कि ब्रिटिश सरकार द्वारा एकतरफा ढंग से उन्हें अविश्वसनीय लोगों के हवाले किया जा रहा है। इसके साथ ही तत्कालीन कम्युनिस्ट खतरे की संभावना भी व्यक्त की तथा वायसराय को बताना चाहा कि कम्युनिस्ट पूरे उपमहाद्वीप की व्यवस्था को ध्वस्त कर देंगे।
माउंटबेटन ने एक बार फिर से नवाब को विलय-पत्र पर हस्ताक्षर कर देने के लिये कहा। वायसराय ने आगे कहा कि संभावित कम्युनिस्टों के खतरे से तब निपटा जा सकता है, जब भारतीय संघ व रियासतें साथ-साथ हों। नवाब को यह जानकारी भी पर्याप्त रूप से हो गई थी कि उसके अधिकांश मित्र रजवाड़े भी विलय-पत्र पर हस्ताक्षर करने को तैयार थे। उसने अपने सम्मान को बचाने हेतु एक छोटी-सी रियायत गांगी तथा वायसराय से उसने प्रार्थना की कि विलय की तिथि को दस दिन बढ़ा दिया जाए। पटेल ने इस आशय का रामनारसन दिया कि नवाब के साथ कोई बुरा बर्ताव नहीं किया जाएगा। अंततोगत्वा भोपाल का नवाब विलय-पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिये तैयार हो गया।

जोधपुर (Jodhpur)-

रियासतों के एकीकरण का एक रोचक मामला जोधपुर रियासत का था, जो एक पुराना व बड़ा रजवाड़ा था। यहाँ राजा व प्रजा दोनों ही हिंदू थे। विलय के मुद्दे पर पहले तो रियासत के नौजवान महाराजा तैयार थे, लेकिन बाद में उनके दिमाग में यह बात आने लगी कि जोधपुर रियासत भौगोलिक रूप से पाकिस्तान के ज्यादा समीप हैं। जोधपुर पाकिस्तान की सरहद को छूता है। अतः महाराजा पाकिस्तान से बेहतर शर्तें हासिल कर सकते हैं। भोपाल के नवाब के नेतृत्व में जिन्ना तथा महाराजा जोधपुर की एक बैठक भी संपन्न हुई। इस बैठक में लीग के नेता ने जोधपुर को कराची में पूर्ण बंदरगाह की सुविधा देने, हथियारों की निर्बाध आपूर्ति तथा उसके अकाल पीड़ितों के लिये सिंध से खाद्यान्न की आपति का भरोसा दिलाया।

अब समस्या यह आ गई कि यदि महाराजा जोधपुर पाकिस्तान की तरफ चले गए तो जयपुर व उदयपुर भी इसी मार्ग पर जा सकते हैं। अतः पटेल ने त्वरित गति से जोधपुर से संपर्क साधा तथा उनकी समस्त ज़रूरतों को परा करने का

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES WHEN ONLY THE BEST WILL DO

नोट – प्रिय पाठकों , **<u>यह एक sample मात्र है</u>** यह अध्याय अभी यहीं समाप्त नही हुआ है, इसमें अभी और भी कंटेंट पढ़ना बाकी है जो आपको **<u>RAS मुख्य परीक्षा के</u>** कम्पलीट नोट्स में पढ़ने को मिलेगा / यह तो एक sample मात्र ही है/ **<u>RAS मुख्य परीक्षा के</u>** कम्पलीट नोट्स खरीदने के लिए हमारे संपर्क नंबर पर कॉल करें , धन्यवाद/

संपर्क करें – 8233195718, 9694804063, 8504091672

हमारे नोट्स के अन्य परीक्षाओं में रिजल्ट (Result)-

RAS Pre. परीक्षा 2021 में हमारे नोट्स में से 73/74 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 79 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबरकी दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 103 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 96 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 91 प्रश्न आये

राजस्थान SI 2021 की परीक्षा कि परीक्षा में भी कई प्रश्न आये हैं -

Proof देखने के लिए हमारे youtube चैनल (InfusionNotes) पर इसकी वीडियो देखें या हमारे नंबरों पर कॉल करें।

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

विश्व इतिहास

अध्याय – I

पुनर्जागरण व धर्म सुधार एवं वाणिज्यवाद

पुनर्जागरण (Renaissance in Europe) का शाब्दिक अर्थ होता है, "फिर से जागना" । चौदहवीं और सोलहवीं शताब्दी के बीच यूरोप में जो सांस्कृतिक प्रगति हुई उसे ही "पुनर्जागरण" कहा जाता है

चौदहवीं शताब्दी से सत्रहवीं शताब्दी तक यूरोप में सांस्कृतिक क्षेत्र में जो आश्चर्यजनक उन्नति हुई, उसे 'पुनर्जागरण' के नाम से पुकारा जाता है। रोमन साम्राज्य के समय यूरोप ने सांस्कृतिक क्षेत्र में अत्यधिक उन्नति की परन्तु रोमन साम्राज्य के पतन के साथ-साथ यूरोप की संस्कृति के विकास का मार्ग अवरुद्ध हो गया। इस समय लोग प्राचीन यूनानी तथा रोमन संस्कृति को भूलकर अंधविश्वासों एवं रूढ़ियों के शिकार बन गये। लोगों में स्वतंत्र चिंतन तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव था। चर्च तथा धर्म का मानव समाज पर बहुत अधिक प्रभाव था। चर्च का विरोध करने वालों को कठोर दण्ड दिया जाता था। परन्तु मध्य युग के अन्त में यूरोप में एक बौद्धिक क्रांति हुई। अब यूरोपवासियों ने स्वतंत्र रूप से चिंतन करना शुरू किया। उनमें प्राचीन यूनान तथा रोम के साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न हुई। अब लोग प्रचलित विश्वासों और प्रथाओं को तर्क की कसौटी पर कसने लगे जिसके फलस्वरूप उनमें प्रचलित अंधविश्वासों के प्रति अरुचि उत्पन्न हुई। साहित्य, कला, विज्ञान आदि क्षेत्रों में अत्यधिक उन्नति हुई। इस प्रकार यूरोप की सभ्यता और संस्कृति का गौरव चरम सीमा पर जा पहुंचा। इस प्रकार प्राचीन संस्कृति की उन्नति एवं परिवर्तन को ही पुनर्जागरण या बौद्धिक चेतना कहा जा सकता है।

कथन

- **पं. जवाहरलाल नेहरू** का कथन है कि, "पुनर्जागरण का अर्थ विद्या का पुनर्जन्म तथा कला, विज्ञान और साहित्य तथा यूरोपीय भाषाओं का विकास है।"

FREE SAMPLE

- ***इतिहासकार स्वेन*** *का कथन है कि, "पुनर्जागरण से ऐसे सामूहिक शब्द का बोध होता है जिसमें मध्यकाल की समाप्ति तथा आधुनिक काल के प्रारम्भ तक के बौद्धिक परिवर्तनों का समावेश होता है।"*
- ***प्रो. ल्यूकस*** *का कथन है कि, "चौदहवीं से सत्रहवीं शताब्दी के बीच में यूरोप में होने वाले महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक परिवर्तनों को 'पुनर्जागरण' कहते हैं।"*
- ***इतिहासकार डेविस*** *के अनुसार, "पुनर्जागरण शब्द मानव के स्वातन्त्र्य प्रिय, साहसी विचारों को जो मध्य युग में धर्माधिकारियों द्वारा जकड़े व बन्दी बना दिये गये थे, व्यक्त करता है।"*
- ***सीमोण्ड*** *के अनुसार, "पुनर्जागरण एक ऐसा आन्दोलन है, जिसके फलस्वरूप पश्चिम के राष्ट्र मध्य युग से निकल कर वर्तमान युग के विचार तथा जीवन की पद्धतियों को ग्रहण करने लगे हैं।"*
- ***फिशर का*** *कथन है कि, "सर्वप्रथम इटली ने नगरों में प्राचीन यूनानी एवं रोमन कला, साहित्य का पुनः सृजन, मानववादी आन्दोलन का प्रारम्भ, स्थापत्य कला एवं चित्रकला का नया स्वरूप, व्यक्तित्व एवं व्यक्तिवादी सिद्धान्तों का विकास, नवीन दृष्टिकोण, वैज्ञानिक तथा ऐतिहासिक आलोचना, छापेखाने का आविष्कार, दर्शन शास्त्र एवं धर्मशास्त्र का नया स्वरूप तथा विवेचन इत्यादि तत्त्वों तथा विशेषताओं को सामूहिक रूप से 'पुनर्जागरण' कहते हैं।*

पुनर्जागरण की प्रमुख विशेषताएँ

1. ***स्वतन्त्र चिंतन को प्रोत्साहन-*** *पुनर्जागरण ने स्वतन्त्र चिन्तन की विचारधारा को प्रोत्साहन दिया। अब मनुष्य परम्परागत विचारों और मान्यताओं को तर्क की कसौटी पर कसने लगा। अब मनुष्य में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का उदय हुआ।*

2. ***व्यक्तित्व का विकास-*** *पुनर्जागरण के परिणामस्वरूप मनुष्य को प्राचीन रूढ़ियों, अंधविश्वासों एवं धार्मिक पाखण्डों से मुक्ति मिली। इसके फलस्वरूप मनुष्य के व्यक्तित्व का स्वतन्त्र रूप से विकास हुआ।*

3. ***मानववादी विचारधारा का विकास-*** *पुनर्जागरण ने मानववादी विचारधारा का प्रसार किया। अब मनुष्य को यह प्रेरणा मिली कि उसे परलोक की चिन्ता छोड़कर इस जीवन*

को आनन्द से बिताना चाहिये। धर्म एवं मोक्ष के स्थान पर मानव-जीवन को सुखी एवं समृद्ध बनाना चाहिये।

५. **देशी भाषाओं का विकास-** पुनर्जागरण के परिणामस्वरूप देशी भाषाओं का अत्यधिक विकास हुआ। अब जन-साधारण की भाषाओं में ग्रन्थ लिखे गए जिसके फलस्वरूप देशी भाषाओं का बहुत अधिक विकास हुआ।

5. **चित्रकला के क्षेत्र में उन्नति-** पुनर्जागरण के परिणामस्वरूप चित्रकला के क्षेत्र में अत्यधिक उन्नति हुई।

6. **वैज्ञानिक विचारधारा का विकास-** पुनर्जागरण के कारण वैज्ञानिक विचारधारा का भी विकास हुआ। अब सभी विषयों को तर्क एवं विज्ञान की कसौटी पर कसा जाने लगा।

पुनर्जागरण के प्रमुख कारण निम्नलिखित थे-

I. धर्म-युद्ध-

- धर्मयुद्ध (क्रूसेड)- ईसाई धर्म के पवित्र तीर्थ स्थान जेरूसलम के अधिकार को लेकर ईसाइयों और मुसलमानों (सेल्जुक तुर्क) के बीच लड़े गये युद्ध इतिहास में 'धर्मयुद्धों के नाम से विख्यात हैं। ये युद्ध लगभग दो सदियों तक चलते रहे। इन धर्मयुद्धों के परिणामस्वरूप यूरोपवासी पूर्वी रोमन साम्राज्य (जो इन दिनों में बाइजेन्टाइन साम्राज्य के नाम से प्रसिद्ध था) तथा पूर्वी देशों के सम्पर्क में आये।
- इस समय में जहाँ यूरोप अज्ञान एवं अन्धकार में डूबा हुआ था, पूर्वी देश ज्ञान के प्रकाश से आलोकित थे।
- पूर्वी देशों में अरब लोगों ने यूनान तथा भारतीय सभ्यताओं के सम्पर्क से अपनी एक नई समृद्ध सभ्यता का विकास कर लिया था। इस नवीन सभ्यता के सम्पर्क में आने पर यूरोपवासियों ने अनेक वस्तुएं देखीं तथा उन्हें बनाने की पद्धति भी सीखी।
- इससे पहले वे लोग अरबों से कुतुबनुमा, वस्त्र बनाने की विधि, कागज ओर छापाखाने की जानकारी प्राप्त कर चुके थे।
- इन धर्म-युद्धों के कारण यूरोपवासियों को पूर्वी देशों की तर्क-शक्ति, प्रयोग पद्धति तथा वैज्ञानिक खोजों की पर्याप्त जानकारी प्राप्त हुई। उन्हें प्राचीन यूनानी तथा रोमन विद्वानों की पुस्तकें पढ़ने का अवसर मिला। जिससे उन लोगों के ज्ञान-विज्ञान में वृद्धि हुई।

FREE SAMPLE

- धर्म-युद्धों के कारण यूरोप के पूर्वी देशों से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हुए। यूरोप के अनेक साहसी लोगों ने पूर्वी देशों की यात्राएँ की तथा अपनी यात्राओं के विवरण लिखे, जिन्हें पढ़ने से यूरोपवासियों के संकीर्ण विचार समाप्त हुए तथा उनके ज्ञान-विज्ञान में वृद्धि हुई।
- धर्मयुद्धों के परिणामस्वरूप यूरोपवासियों को नवीन मार्गों की जानकारी मिली और यूरोप के कई साहसिक लोग पूर्वी देशों की यात्रा के लिए चल पड़े। उनमें से कुछ ने पूर्वी देशों की यात्राओं के दिलचस्प वर्णन लिखे, जिन्हें पढ़कर यूरोपबासियों की कूप-मंडूकता दूर हुई।
- मध्ययुग में लोग अपने सर्वोच्च धर्माधिकारी पोप को ईश्वर का प्रतिनिधि मानने लगे थे। परन्तु जब धर्मयुद्धों में पोप की सम्पूर्ण शुभकामनाओं एवं आशीर्वाद के बाद भी ईसाइयों की पराजय हुई तो लाखों लोगों की धार्मिक आस्था डगमगा गई और वे सोचने लगे कि पोप भी हमारी तरह एक साधारण मनुष्य मात्र है।

2. पूर्व से सम्पर्क-

पूर्वी देशों के सम्पर्क में आने से यूरोपवासी अत्यधिक प्रभावित हुए। अरब लोग स्वतन्त्र रूप से चिंतन करते थे। उन्हें अरस्तू, प्लेटो आदि की पुस्तकों का भी ज्ञान था। इस प्रकार अरब लोगों ने यूर पियनों का ध्यान यूनानी दर्शन, ज्ञान-विज्ञान आदि की ओर आकर्षित किया । यूरोपियन लोगों ने अरबों तथा चीन से कुतुबनुमा, बारूद, कागज, छापेखाने आदि की जानकारी प्राप्त की। इस प्रकार पूर्वी देशों के सम्पर्क में आने से यूरोपवासियों में स्वतन्त्र चिंतन, वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि की भावनाएँ उत्पन्न हुईं।

3. मंगोलों का योगदान-

- 13वीं शताब्दी में मंगोल नेता कुबलई खाँ ने एक विशाल मंगोल साम्राज्य थापित किया। कुबलई खाँ ने अपने दरबार में अनेक विद्वानों, साहित्यकारों, धर्म प्रचारकों, राजदूतों आदि को संरक्षण दे रखा था। इटली का प्रसिद्ध यात्री मार्कोपोलो भी उसके दरबार में पहुंचा था। चीन से लौटकर उसने अपनी यात्रा का रोचक वर्णन लिखा। इस वर्णन से यूरोपवासियों को नये-नये देशों की खोज करने तथा अपनी संस्कृति को विकसित करने की प्रेरणा मिली।

- प्रसिद्ध यात्री कोलम्बस भी कुबलई खाँ के दरबार में पहुंचा। उसने कुबलई खाँ से प्रभावित होकर समुद्री यात्रा के लिए प्रस्थान किया। अरबों तथा मंगोलों के सम्पर्क से यूरोपवासियों को छापाखाना, कुतुबनुमा, बारूद, कागज आदि की जानकारी हुई। इन चीजों की जानकारी ने यूरोपवासियों के दृष्टिकोण में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया।
- यूरोप के बहुत से देशों विशेषकर स्पेन, सिसली और सार्डिनिया में अरबों के बस जाने से पूर्व यूरोपवासियों को बहुत सी बातें सीखने को मिलीं। अरब लोग स्वतन्त्र चिन्तन के समर्थक थे और उन्हें यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिकों प्लेटो तथा अरस्तु की रचनाओं से विशेष लगाव था।
- ये दोनों विद्वान् स्वतंत्र विचारक थे और उनकी रचनाओं में धर्म का कोई सम्बन्ध न होता था। अरबों के सम्पर्क से यूरोपवासियों का ध्यान भी प्लेटो तथा अरस्तु की ओर आकर्षित हुआ। तेरहवीं सदी के मध्य में कुबलाई खाँ ने एक विशाल मंगोल साम्राज्य स्थापित किया और उसने अपने ही तरीके से यूरोप और एशिया को एक-दूसरे से परिचित कराने का प्रयास किया। उसके दरबार में जहाँ पोप के दूत तथा यूरोपीय देशों के व्यापारी एवं दस्तकार रहते थे, वहीं भारत तथा अन्य एशियाई देशों के विद्वान् भी रहते थे।

4. नगरों का विकास-

व्यापार के विकास के कारण यूरोप में नगरों का विकास हुआ। व्यापारी लोग नगरों में रहने लगे। नगरों के विकास के कारण व्यापारी लोग धनवान बनते चले गये। इन्होंने अपने रहने के निवास स्थानों को सुन्दर चित्रों एवं मूर्तियों से सुसज्जित करवाया। नगरों के निवासी स्वतन्त्र वातावरण को पसन्द करते थे तथा कठोर नियमों के बन्धनों में बँधने के लिए तैयार नहीं थे। ये लोग मध्ययुगीन रूढ़ियों तथा अंधविश्वासों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे। इन लोगों की प्राचीन यूनानी तथा रोमन साहित्य एवं कला में रुचि थी। अतः नगरों के विकास के कारण स्वतन्त्र चिंतन की प्रवृत्ति का विकास हुआ तथा लोगों में प्राचीन यूनानी एवं रोमन साहित्य तथा कला के प्रति रुचि भी बढ़ी। इससे पुनर्जागरण को प्रोत्साहन मिला।

5. व्यापार का विकास-

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES WHEN ONLY THE BEST WILL DO

धर्म-युद्धों के कारण यूरोप के पूर्वी देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हुए। इससे व्यापार की अत्यधिक उन्नति हुई। उस समय वेनिस, मिलान, फ्लोरेन्स आदि व्यापार के प्रसिद्ध केन्द्र बन गए। इस व्यापारिक सम्पर्क से यूरोपवासियों के ज्ञान में वृद्धि हुई। व्यापारिक विकास के कारण अनेक नगरों का उदय एवं विकास भी हुआ। नगरों का वातावरण स्वतन्त्रता का था जिससे व्यापारियों में स्वतन्त्र चिंतन की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई। इसके अतिरिक्त धन की प्रचुरता के कारण व्यापारियों को अध्ययन करने का अवसर मिला। धनी व्यापारियों को बगदाद, काहिरा आदि से खरीदी हुई पुस्तकें पढ़ने का अवसर मिला। जिससे उनके ज्ञान-विज्ञान में वृद्धि हुई। व्यापारी लोग साहित्यकारों, लेखकों, कवियों, विद्वानों, कलाकारों आदि को उदारतापूर्वक आर्थिक सहायता देने लगे। इसके फलस्वरूप साहित्य, कला, विज्ञान आदि क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण उन्नति हुई।

6. सामन्तों की शक्ति का क्षीण होना-

मध्य युग में सामन्तों का अत्यधिक प्रभाव था। सामन्त अपने क्षेत्रों में शासकों की भाँति शासन करते थे। वे सामान्य जनता से अनेक प्रकार के कर वसूल करते थे। ये लोग युद्धों एवं लूटमार में भी लिप्त रहते थे। सामन्तों के कारण गृह-कलह, अशांति एवं अराजकता व्याप्त थी। सामन्त और चर्च के धर्माधिकारी दोनों जनता का शोषण करते थे। परन्तु 14वीं शताब्दी के अन्त तक सामन्तों की शक्ति अत्यन्त क्षीण हो चुकी थी। सामन्तवाद के पतन के कारण यूरोप में सुदृढ़ एवं राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना हुई तथा अंशाति एवं अराजकता का वातावरण समाप्त हुआ। अब जनता के लिए स्वतन्त्र रूप से चिंतन करना सुगम हो गया। परिणामस्वरूप साहित्य, कला, विज्ञान आदि की उन्नति के लिए अनुकूल वातावरण बन गया।

7. शिक्षा का विकास-

मध्य युग के अन्त में शिक्षा की काफी उन्नति हुई। यूरोप के प्रमुख नगरों में विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई। इन विश्वविद्यालयों में विद्यार्थी किसी भी विषय का अध्ययन कर सकते थे, क्योंकि ये धार्मिक नियंत्रण से मुक्त थे। शिक्षा के विकास के कारण मनुष्य में स्वतन्त्र चिंतन, तार्किक दृष्टिकोण और वैज्ञानिक चेतना का विकास हुआ। अब उसे धार्मिक

पाखण्डों, रूढ़ियों और अंधविश्वासों में कोई रुचि नहीं रही तथा वह प्रत्येक विषय पर स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करने लगा।

8. भौगोलिक खोजें-

भौगोलिक खोजों ने भी पुनर्जागरण के विकास में योगदान दिया। मार्कोपोलो, कोलम्बस, वास्कोडिगामा आदि साहसी यात्रियों ने भारत, चीन एवं अरब देशों के जल-मार्गों की खोज की। भौगोलिक खोजों के कारण यूरोपीय व्यापार की उन्नति हुई। अब यूरोपवासी अपने व्यापार एवं धर्म प्रचार के लिए विश्व के विभिन्न भागों में पहुंचने लगे। जब ये लोग दूसरे देशों की सभ्यता के सम्पर्क में आए तो उनके ज्ञान में वृद्धि और उनकी चिंतन शक्ति का विकास हुआ। अब उनकी संकीर्णता समाप्त होने लगी और उनका दृष्टिकोण व्यापक हुआ। उनकी वेशभूषा, खान-पान, रहन-सहन के ढंग में परिवर्तन हुआ। इस प्रकार भौगोलिक खोजों ने पुनर्जागरण के लिए अनुकूल वातावरण तैयार कर दिया।

9. कागज तथा छापाखाना-

कागज एवं छापेखाने के आविष्कार ने भी पुनर्जागरण के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। कागज और छापेखाने का आविष्कार चीन ने किया। यूरोपवासियों को कागज और छापेखाने की जानकारी अरबों से प्राप्त हुई। 1450 में छापेखाने का आविष्कार जर्मनवासी गुटनबर्ग ने किया था। शीघ्र ही यूरोप के प्रमुख नगरों में छापेखाने की स्थापना हो गई। छापेखाने के आविष्कार के कारण पुस्तकें सस्ते मूल्यों पर मिलने लगीं। अब साधारण व्यक्ति भी पुस्तकें खरीद सकता था तथा पढ़ सकता था। पुस्तकों, समाचार पत्रों आदि के माध्यम से लोग बड़े लाभान्वित हुए। उनके अंधविश्वास धीरे-धीरे कम होने लगे और उनमें स्वतन्त्र चिंतन की प्रवृत्ति विकसित हुई।

10. विज्ञान के क्षेत्र में उन्नति-

मध्ययुग के उत्तरार्द्ध में विज्ञान के क्षेत्र में भी उन्नति हुई। इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध वैज्ञानिक रोजर बैकन ने तर्क और प्रयोग पर बल दिया। उसका कहना था कि जो बात तर्क और विज्ञान की कसौटी पर खरी उतरे, केवल उसे ही स्वीकार करना चाहिये । कोपर निकस, ब्रूनो, गैलीलियो आदि प्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने ज्योतिष एवं खगोल के क्षेत्र में अनेक नवीन आविष्कार कर प्राचीन मान्यताओं का खण्डन किया। इन वैज्ञानिक खोजों के कारण मनुष्य

में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न हुआ और उसका विश्वास प्राचीन रूढ़ियों एवं अंधविश्वासों से हटने लगा। अब यूरोपवासियों की तर्क, विज्ञान और प्रयोग में रुचि बढ़ने लगी।

***II. स्कालिस्टिक विचारधारा** (पांडित्यवाद) -*

- *मध्ययुग के उत्तरार्द्ध में यूरोपीय दर्शन के क्षेत्र में एक नई विचारधारा प्रारम्भ हुई जिसे 'विद्युतावाद' (स्कालिस्टिक) अथवा पांडित्यावाद के नाम से पुकारा जाता है। इस पर अरस्तु के तर्कशास्त्र का गहरा प्रभाव था। बाद में इसमें सेन्ट आगस्टाइन के तत्वज्ञान को भी सम्मिलित कर दिया गया। अब इसमें धार्मिक विश्वास और तर्क दोनों सम्मिलित हो गये।*
- *पेरिस, ऑक्सफोर्ड आदि विश्वविद्यालयों ने इस विचारधारा को तेजी से आगे बढ़ाया और उसी बात को सही मानने का निर्णय किया जो तर्क की सहायता से सही पाई जा सके। कालान्तर में इस विचारधारा का प्रभाव जाता रहा परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसने यूरोपवासियों की चिन्तनशक्ति को विकसित करके ठनकी तर्कशक्ति को भी सबल बनाया था।*
- *इसमें तर्क तथा धर्म दोनों का समन्वय था। इससे विद्याध्ययन तथा वाद-विवाद को प्रोत्साहन मिला। परन्तु प्रसिद्ध वैज्ञानिक रोजर बैकन ने इस विचाराधारा का विरोध किया तथा वैज्ञानिक प्रयोगों पर बल दिया।*

12. कुस्तुन्तुनिया पर तुर्कों का अधिकार-

- *1453 ई. में उस्मानी तुर्कों ने कुस्तुन्तुनिया नगर पर अधिकार कर लिया। कुस्तुन्तुनिया यूनानी, ज्ञान, दर्शन एवं कला का प्रसिद्ध केन्द्र था। कुस्तुन्तुनिया के पतन के पश्चात् यहाँ रहने वाले अनेक यूनानी विद्वान अपने ग्रन्थों के साथ इटली में शरण लेने के लिए पहुंचे। वहाँ उन्होंने प्राचीन यूनानी एवं रोमन साहित्य दर्शन आदि का प्रचार किया।*
- *यूरोपवासी प्राचीन यूनानी एवं रोमन साहित्य एवं दर्शन से अत्यधिक प्रभावित हुए। उन्हें नवीन वैज्ञानिक एवं समालोचनात्मक दृष्टिकोण मिला। रोम ने ही यूरोप में प्राचीन ज्ञान का प्रकाश फैलाया था। यही कारण था कि पुनर्जागरण इटली में ही सर्वप्रथम शुरू हुआ और धीरे-धीरे इसका प्रभाव समस्त यूरोप पर दिखाई देने लगा।*
- *कुस्तुन्तुनिया पर तुर्कों की विजय का एक महत्त्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि इससे यूरोपवासियों को नये देशों तथा मार्गों की खोज करने की प्रेरणा मिली। अब यूरोपवासी*

FREE SAMPLE

पूर्वी देशों के साथ व्यापार करने के लिए नये जल मार्गों की खोज के लिए निकल पड़े इसी संदर्भ में कोलम्बस ने अमेरिका की तथा वास्कोडिगामा ने भारत के जल मार्गों की खोज की। इससे भी पुनर्जागरण को प्रोत्साहन मिला।

मानववाद

- मानववाद का शाब्दिक अर्थ है-'उन्नत ज्ञान' । मानववादी स्वतन्त्र विचारों के व्यक्ति थे।
- उनका धर्म की संकुचित विचारधारा में विश्वास नहीं था। वे यूनानी तथा रोमन साहित्य से प्रभावित थे। वे परलोक की अपेक्षा इस जीवन की अधिक चिन्ता करते थे।
- वे वर्तमान जीवन को सुखी और आनन्ददायक बनाने पर जोर देते थे।
- उनका कहना था कि मनुष्य को परलोक की चिन्ता छोड़कर इस जीवन को आनन्द के साथ व्यतीत करना चाहिये। वे सत्य, तर्क और स्वतंत्र चिंतन का प्रचार करते थे।
- मानववाद के प्रसार के कारण लोगों की धर्म शास्त्रों में रुचि कम हो गई, उनके अंधविश्वास दूर होने लगे और उनमें स्वतन्त्र चिंतन की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई। अब लोगों में प्राचीन यूनानी एवं रोमन साहित्य के अध्ययन में रुचि उत्पन्न हुई।
- मानववाद अथवा मानववादी विचारधारा पुनर्जागरण का एक प्रमुख लक्षण था शिक्षा के प्रसार के कारण इस विचरधारा का दर्शन सर्वप्रथम इटली में ही होता है।
- इस विचारधारा का सीधा-सादा अर्थ है- मानव जीवन में रुचि लेना, मानव जीवन को सुखी, समृद्ध एवं उन्नत बनाकर उसके व्यक्तित्व को प्रतिष्ठित करना।
- प्राचीन यूनानी साहित्य में जीवन के प्रति एक विशेष रुचि झलकती हैं क्योंकि यूनानी लोग उस संसार में गहरी रुचि रखते थे, जिसमें वे लोग जी रहे थे।
- पुनर्जागरण काल में जो विद्वान मानव एवं प्रकृति की रुचियों का विवेचन करके उसमें रुचि लेने लगे थे, उन्हें 'मानववादी' के नाम से पुकारा जाता है। उन्होंने मोजूदा से संसार और उसमें रहने वाले लोगों की समस्याओं पर अपनी लेखनी उठाई थी, जबकि मध्ययुग के लेखकों का दृष्टिकोण ठीक इसके विपरीत था। मध्ययुगीन लेखकों के लिए मानव तथा उसके संसार का विशेष स्थान न था। उनके विचारों पर चर्च एवं धर्म का जबरदस्त प्रभाव छाया हुआ था और धर्म की ओट में अन्धविश्वासों तथा रूढ़ियों को प्रश्रय मिल रहा था।

- इटली के नगरों की आर्थिक समृद्धि और विदेशों के साथ बढ़ते हुए सम्पर्क ने मानववादी विचारधारा को जन्म दिया। इस विचारधारा के विकास के परिणामस्वरूप मध्ययुगीन वातावरण में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आ गये। अब धर्मिक विषयों के स्थान पर इतिहास, भूगोल, विज्ञान, सोन्दर्यशास्त्र जैसे विषयों के अध्ययन पर जोर दिया जाने लगा और लेखकों ने भी मानव जीवन की विभिन्न समस्याओं प्रेम, घृणा, विरह, मिलन, दाम्पत्य जीवन, नारी सोन्दर्य आदि पर अपना ध्यान केन्द्रित किया।

मानववादी आन्दोलन के प्रारम्भिक समर्थकों में पेट्राक का स्थान सर्वोपरि.....

नोट – प्रिय पाठकों , **यह एक sample मात्र है** यह अध्याय अभी यहीं समाप्त नही हुआ है, इसमें अभी और भी कंटेंट पढ़ना बाकी है जो आपको **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स में पढ़ने को मिलेगा / यह तो एक sample मात्र ही है/ **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स खरीदने के लिए हमारे संपर्क नंबर पर कॉल करें , धन्यवाद/

संपर्क करें – 8233195718, 9694804063, 8504091672

हमारे नोट्स के अन्य परीक्षाओं में रिजल्ट (Result)-

RAS Pre. परीक्षा 2021 में हमारे नोट्स में से 73/74 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 79 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबरकी दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 103 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 96 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 91 प्रश्न आये

राजस्थान SI 2021 की परीक्षा कि परीक्षा में भी कई प्रश्न आये हैं -

Proof देखने के लिए हमारे youtube चैनल (InfusionNotes) पर इसकी वीडियो देंखें या हमारे नंबरों पर कॉल करें /

- ***धर्म सुधार***

यूरोप में धर्म सुधार आन्दोलन

धर्म सुधार आन्दोलन का अर्थ('प्रोटेस्टेण्ट क्रान्ति')

- पोप की धार्मिक प्रभुता, चर्च की बुराइयों तथा धर्माधिकारियों के पाखण्डों और आडम्बरों को समाप्त करने के लिए जो आन्दोलन चलाया गया, वही यूरोप के इतिहास में धर्म सुधार आन्दोलन के नाम से पुकारा जाता है। 16 वीं शताब्दी में पोप के धार्मिक प्रभुत्व को नष्ट करने, चर्च की बुराइयों का अन्त करने एवं धार्मिक पाखण्डों को नष्ट करने के लिए जो आन्दोलन शुरू किया गया उसे धर्म सुधार आन्दोलन की संज्ञा दी गई।
- वार्नर तथा मार्टिन लूथर का कथन है कि, "धर्म सुधार आन्दोलन पोप की सांसारिकता तथा भ्रष्टाचार के विरुद्ध एक नैतिक विद्रोह था।'
- इतिहासकार डी.जे. हिल के शब्दों में, "धर्म सुधार आन्दोलन, धार्मिक भ्रष्टाचारों की उपस्थिति के कारण जो कि अब अधिक सहन नहीं किये जा सकते थे, जर्मन मस्तिष्क एवं प्रकृति के संविधान की तर्कसंगत एवं आवश्यक उपज थी।" ईसाई धर्म के विभाजन की कहानी बहुत पुरानी है।

FREE SAMPLE

- शुरू में, ईसाई धर्म दो प्रमुख शाखाओं-रोमन कैथोलिक चर्च और ओर्थोडिक्स चर्च में विभाजित हो गया था। यूरोप में रूस तथा बाल्कन प्रायद्वीप को छोड़कर अन्य सभी देशों में रोमन कैथोलिक चर्च का प्रभाव एवं नियन्त्रण कायम हो गया। यह प्रभाव कई शताब्दियों तक कायम रहा और जैसा कि बताया जा चुका है कि मध्य युग में चर्च धर्म-विरोधी बातों को समाप्त करने में समर्थ रहा।
- परन्तु सोलहवीं सदी में जब चर्च की कुछ धार्मिक बातों एवं विचारों के विरुद्ध जबरदस्त विद्रोह उठ खड़ा हुआ तो चर्च न तो इसे दबाने में समर्थ रहा और न ही विद्रोहियों की माँग पूरी कर पाया।
- दूसरी तरफ, सुधारकों अथवा विद्रोहियों ने भी अपने धार्मिक विश्वासों को छोड़ना उचित नहीं समझा और उन्होंने रोमन चर्च का परित्याग कर अपने निजी चर्च की स्थापना करना अधिक उचित समझा।
- इस प्रकार कैथोलिक चर्च का विभाजन हो गया। धर्म के क्षेत्र में यह जो जन आन्दोलन चला, उसे अंग्रेजी भाषा में 'रिफारमेशन' कहते हैं। चूँकि आन्दोलनकारियों ने कैथोलिक चर्च का प्रोटेस्ट (विरोध किया था, अतः उनके द्वारा स्थापित नया धर्म 'प्रोटेस्टेण्ट धर्म' के नाम से भी प्रसिद्ध हुआ।
  - इसी नाम के कारण यह आन्दोलन 'प्रोटेस्टेण्ट क्रान्ति' के नाम से भी पुकारा जाता है। इस आन्दोलन का प्रारम्भिक ध्येय कैथोलिक चर्च में विद्यमान भ्रष्टाचार को दूर करके धर्म में सुधार करना था। परन्तु बाद में इसका प्रारम्भिक ध्येय बदल गया और सुधार के स्थान पर एक नये धर्म की स्थापना हुई और यूरोप के इतिहास में यह घटना धर्म सुधार आन्दोलन के नाम से प्रसिद्ध हुई।

यूरोप में धर्म सुधार आन्दोलन

इतिहासकार हेज लिखते हैं कि, "वस्तुत; सोलहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में धार्मिक व विवेक की जागृति के कारण बहुसंख्यक ईसाई कैथोलिक चर्च के कटु आलोचक थे तथा वे धर्म की संस्था को एक सिरे से दूसरे सिरे तक सुधारना चाहते थे। इस सुधार प्रयास के

परिणामस्वरूप जो धार्मिक आन्दोलन हुआ व उससे उत्पन्न ईसाई धर्म के अन्तर्गत जो नये-नये सम्प्रदाय बने, उसे समष्टि रूप से धर्म सुधार आन्दोलन कहा जाता है।

धर्म सुधार आन्दोलन के उद्देश्य

1. पोप तथा प्रमुख धर्माधिकारियों के जीवन में नैतिक सुधार करना।
2. चर्च की बुराइयों एवं भ्रष्टाचार को दूर करना।
3. धर्माधिकारियों को भौतिकवाद से विमुख कर आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख करना।
4. कैथोलिक धर्म में आए हुए आडम्बरों को समाप्त करना तथा जनता के सामने धर्म का सच्चा स्वरूप प्रस्तुत करना।

धर्म सुधार आन्दोलन के कारण

धर्म सुधार आन्दोलन पुनर्जागरण की भाँति एक आकस्मिक घटना नहीं कही जा सकती। इसके अलावा इस आन्दोलन का क्षेत्र भी व्यापक था अतः इसके कारण भी केवल धार्मिक क्षेत्र तक ही सीमित न रहे। इस आन्दोलन को प्रेरणा मिली-बौद्धिक जागृति से, नवीन देशों की खोज से व विज्ञान के प्रसार से। अतः इसके कारण का क्षेत्र भी व्यापक बन गया। इसके महत्त्वपूर्ण कारण अग्रांकित हैं-

I. पुनर्जागरण का प्रभाव-

- पुनर्जागरण का प्रभाव-चौद्धिक पुनर्जागरण ने यूरोपवासियों की मध्ययुगीन मान्यताओं, जो धर्म के अन्धविश्वासी बन्धनों में जकड़ी हुई थीं, को समाप्त कर दिया और उन्हें एक स्वतन्त्र एवं निडर विचारधारा प्रदान की, जिसके फलस्वरूप वे धर्म का सही रूप समझने में सफल हुए।
- पुनर्जागरण ने व्यक्ति तथा इस संसार को समझने वाली शिक्षा का प्रचार किया और आलोचना तथा जाँच की आवश्यकता पर जोर दिया। इससे शताब्दियों से स्थापित विश्वासों की नींव हिलने लग गई।
- धर्मसुधारकों ने रोमन चर्च के सिद्धान्तों एवं अनुशासन के बारे में भी आलोचना एवं विचार-विमर्श करने की आवश्यकता पर जोर दिया।

FREE SAMPLE

- पुनर्जागरण ने मध्ययुगीन धार्मिक पद्धति से दी जाने वाली स्कूली शिक्षा पर भी घातक प्रहार किया।
- यूनानी एवं लेटिन के अध्ययन एवं प्राचीन तथा नवीन टेस्टामेंट (बाइबिल) की आलोचना प्रक्रिया तथा मुद्रणालय के द्वारा धर्म के गूढ़ तत्त्व सर्वसाधारण तक पहुँचने लगे और इस प्रकार के साहित्य के प्रचार ने सुधार आन्दोलन की गति को उत्साहित एवं प्रेरित किया।

2. धार्मिक कारण-

(1) पोप का स्वरूप विकृत होना- पोप कैथोलिक चर्च का सर्वोच्च एवं सर्वसत्ता सम्पन्न अधिकारी होता था। यह ईश्वर का प्रतिनिधि समझा जाता था परन्तु उत्तर मध्यकाल में पोप धर्म के क्षेत्र में रुचि न लेकर राजनीति में अधिक रुचि लेने लगा। पोप भव्य प्रासादों में निवास करता था व सांसारिक सुखों का आनन्द लेता था। परिणामस्वरूप जनसाधारण को धर्म से आस्था उठने लगी और उसमें सुधार चाहने लगे।

(2) धर्माधिकारियों द्वारा अपने कर्तव्यों की उपेक्षा- धर्माधिकारियों की नियुक्ति गिरिजाघरों में जनसाधारण को धर्म की शिक्षा देने के लिए की जाती थी। परन्तु उत्तर मध्यकाल में धर्माधिकारी जनसाधारण को न तो बाइबिल की सही व्याख्या कराते थे और न उनको धार्मिक शिक्षा देते थे। जनसाधारण धर्माधिकारियों की धार्मिक कार्य न कराने पर आलोचना करने लगे और गिरिजाघरों में सुधार करने की आवाज उठाने लगे।

(3) धर्माधिकरियों का विलाली जीवन- पोप के अधीनस्थ धर्माधिकारी भी पोप की भाँति सांसारिक सुखों का आनन्द लेने लगे। पैसे की उनके पास कोई कमी नहीं थी। अतः उनका कहना था कि भगवान ने उनको नाना प्रकार के सुख प्रदान किये हैं-हम उनका उपभोग क्यों न करें? अतः विलासिता उनकी संगिनी बनने लगी। नैतिकता क्या है-इसका उनके जीवन में कोई प्रश्न ही नहीं उठता था।

FREE SAMPLE

(4) धर्माधिकारियों की नियुक्ति योग्यता के आधार पर न होना- *धर्माधिकारियों की नियुक्ति के समय उनकी कुछ योग्यताओं पर अवश्य विचार होना चाहिए था पर उनके पद तो अब व्यावसायिक होते जा रहे थे। धनी पुरुष अपने पैसे के सहारे धर्माधिकारियों के पद प्राप्त कर रहे थे और जनता का शोषण कर रहे थे। क्योंकि धर्माधिकारियों को पैसे के अलावा भी कई अन्य विशेषाधिकार प्राप्त होते थे।*

(5) छोटे पादरियों में असन्तोष व्याप्त होना- *धर्माधिकारियों की भी कई श्रेणियाँ थीं। छोटे धर्माधिकारियों को धन-प्राप्ति के साधन कम प्राप्त होते थे। इस कारण वे बड़े पादरियों से उनके वैभव, धन व प्रतिष्ठा के कारण द्वेष रखते थे। इस कारण छोटे पादरी बड़े पादरियों की स्वयं आलोचना करते थे तथा उन्हें हटाने के लिए लोगों को प्रोत्साहित करते थे।*

(6) धर्म में मिथ्याडम्बरों का समावेश- *कैथोलिक धर्म अब अन्धविश्वासों व मिथ्याडम्बरों का धर्म होता जा रहा था। धर्माधिकारी जनसाधार को धर्म का सही अर्थ न बताकर उनमें प्राचीन रूढ़ियों व परिपाटियों के सहारे ही धार्मिक आस्था बनाये रखने का प्रयास करते थे। पोप ने यह कहना आरम्भ कर दिया था कि वह किसी भी पापी को मुक्ति दिलाने में सक्षम है।*

(7) विभिन्न धर्मसुधारकों का आविर्भाव- *उस समय कोई भी व्यक्ति पोप तथा कैथोलिक धर्म की बुराइयों की आलोचना करने का साहस नहीं कर सकता था। विरोध करने वाले को पोप जाति च्युत व जीवित अग्नि देवता की भेंट चढ़ा देता था परन्तु इन अत्याचारों के बावजूद भी इस डैन्सैस, वाइक्लिक, जान हस, सैवीनारोला, इरास्मस आदि धर्म सुधारक हुए जिन्होंने धार्मिक आध्यात्मिक बनाये रखने के लिए धर्म तथा धर्माधिकारियों के जीवन में सुधार की माँग की। यद्यपि इस कार्य में उन्हें अपने प्राणों से हाथ धोने पड़े पर उन्होंने जनसाधारण में धर्मसुधार की माँग को प्रबल बना दिया।*

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

3. राजनीतिक कारण-

(1) कैथोलिक चर्च का एक राजनीतिक संस्था होना- चर्च को सच्चे अर्थों में तो एक धार्मिक संस्था होनी चाहिए। पर मध्यकाल में धर्माधिकारियों ने धार्मिक क्रिया-कलापों से मन को हटाकर राजनीतिक कार्यों में प्रदर्शित करना आरम्भ कर दिया। धर्माधिकारी स्वयं की अदालतें लगाते थे। किसानों व सामान्य लोगों पर कई प्रकार के कर लगाते थे। धर्माधिकारियों का इस प्रकार विशेषाधिकार से सुसज्जित रहना राजा व जनता दोनों की ही निगाह में खटकने लगा था।

(2) राष्ट्रीय राज्यों का उदय- पन्द्रहवीं शताब्दी से यूरोप में अब शक्तिशाली राज्यों का उदय होने लग गया था। शासक राजनीतिक कार्यों में पोप व उसके अधीनस्थ धर्माधिकारियों का हस्तक्षेप सहन करने को उद्यत नहीं थे। जनता में व्यापारी वर्ग राष्ट्रीय राज्यों का पक्षपाती होता जा रहा था क्योंकि वह जानता था कि उसका व्यापार शक्तिशाली राज्यों के आश्रय में ही फलीभूत हो सकता है।

(3) शासकों में निरंकुशता की भावना- शासक वर्ग नहीं चाहता था कि धर्माधिकारी अपने यहाँ न्यायालयों की स्थापना कर न्याय प्रदान करने का अधिकार रखें। वे यह नहीं चाहते थे कि धर्माधिकारी किसानों से कर वसूल करें वे यह भी नहीं चाहते थे कि पादरी लोग विशाल भू-भाग के स्वामी बने रहें परन्तु शासक इन उद्देश्यों की प्राप्ति तभी कर सकते थे जबकि पोप से अपना सम्बन्ध .....

FREE SAMPLE

नोट – प्रिय पाठकों , **यह एक sample मात्र है** यह अध्याय अभी यहीं समाप्त नही हुआ है, इसमें अभी और भी कंटेंट पढ़ना बाकी है जो आपको **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स में पढ़ने को मिलेगा / यह तो एक sample मात्र ही है/ **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स खरीदने के लिए हमारे संपर्क नंबर पर कॉल करें , धन्यवाद/

संपर्क करें – 8233195718, 9694804063, 8504091672

हमारे नोट्स के अन्य परीक्षाओं में रिजल्ट (Result)-

RAS Pre. परीक्षा 2021 में हमारे नोट्स में से 73/74 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 79 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबरकी दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 103 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 96 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 91 प्रश्न आये

राजस्थान SI 2021 की परीक्षा कि परीक्षा में भी कई प्रश्न आये हैं -

INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO
FREE SAMPLE

Proof देखने के लिए हमारे youtube चैनल (InfusionNotes) पर इसकी वीडियो देंखें या हमारे नंबरों पर कॉल करें।

अध्याय – 3

एशिया व अफ्रीका में साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद

एशिया में साम्राज्यवाद
(Imperialism in Asia and Africa)

साम्राज्यवाद का अर्थ – "साम्राज्यवाद" शब्द की व्याख्या भिन्न-भिन्न विद्वानों ने अलग-अलग ढंग से की है। परन्तु इतिहास के सन्दर्भ में साम्राज्यवाद का अर्थ है-भिन्न प्रजाति वाले देश पर किसी दूसरे देश का राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित हो जाना। वैसे सामान्यतः यह माना जाता है कि जब कोई देश किसी अन्य देश पर किसी भी उपाय से अपना शासन स्थापित कर लेता है तो उसका यह काम साम्राज्यवाद का रूप धारण कर लेता है। प्राचीनकाल से ही शक्तिशाली शासक अपने देश की सीमाओं से निकलकर अन्य देशों को जीतकर साम्राज्यों का निर्माण करते आये थे।

यूरोपीय साम्राज्यवाद (नवीन साम्राज्यवाद)का उदय– पुनर्जागरण के परिणामस्वरूप यूरोप में जो वातावरण तैयार हो रहा था उसने यूरोपवासियों में भूगोल के प्रति अभिरुचि को विकसित किया और वे नये-नये प्रदेशों तथा जल मार्गों की खोज में निकल पड़े। इस कार्य में पुर्तगाल तथा स्पेन के नाविक सबसे आगे रहे। 1492 ई. में स्पेन की रानी की सहायता से कोलम्बस ने अमेरिका (नई दुनियाँ) को खोज निकाला तो 1498 ई. में वास्कोडिगामा भारत के सुप्रसिद्ध बन्दरगाह कालीकट तक जा पहुँचा । अमेरिका में उपनिवेशों को स्थापना का सिलसिला शुरू हुआ और भारत तथा सुदूर-पूर्व में व्यापारिक चौकियाँ कायम की जाने लगीं। अफ्रीका के समुद्री तटों पर भी केन्द्र स्थापित किये जाने लगे। पुर्तगाल ने ब्राजील पर अधिकार जमाया तो स्पेन ने मध्य एवं दक्षिणी अमेरिका के एक विस्तृत भू-भाग पर अपना अधिकार जमाया। सत्रहवीं सदी में हालैण्ड, फ्रांस और

इंगलैण्ड भी इस दौड़ में सम्मिलित हो गये और धीरे-धीरे यूरोपीय देशों ने शेष विश्व को आपस में बाँट लिया। इसलिए कई विद्वान् यूरोप के विस्तार को 'साम्राज्यवाद' के नाम से सम्बोधित करते हैं।

साम्राज्यवाद के प्रसार के कारण

(अ) आर्थिक

I. अतिरिक्त उत्पादन- 1870 ई. के आसपास औद्योगिक क्रान्ति का पहला चरण समाप्त हो गया था और इस काल में यूरोप के औद्योगिक देशों के उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई। के परन्तु 1870 ई. के बाद यूरोपीय राज्यों में अभूतपूर्व औद्योगिक विकास हुआ। कुछ समय बाद संयुक्त राज्य अमेरिका और एशियाई देश जापान भी औद्योगिक देशों की पंक्ति में आ गये। औद्योगिक विकास के फलस्वरूप प्रत्येक देश में उत्पादन इतना अधिक बढ़ गया कि उसे अपने ही देश में खपाना कठिन हो गया। अतः तैयार माल को खपाने के लिए ऐसे बाजारों की आवश्यकता हुई जिन पर औद्योगिक देश अपना एकाधिकार रख सकें।

2. कच्चे माल की आवश्यकता- औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि के कारण कच्चे माल की माँग भी बढ़ने लगी। कच्चे माल को माँग साम्राज्यवाद का एक प्रमुख कारण था क्योंकि कई औद्योगिक देशों में—वर, टिन, टंगस्टन, मैंगनीज, कपास, वनस्पति तेल आदि के पर्याप्त भण्डारों का अभाव था। अतः इस माँग की पूर्ति के लिए औद्योगिक देशों ने ऐसे पिछड़े क्षेत्रों पर अधिकार करने का प्रयास शुरू किया जहाँ से उन्हें पर्याप्त मात्रा में और सस्ते दामों पर कच्चा माल मिल सके। इसके अलावा, बहुत से औद्योगिक देशों में खाद्य पदार्थों को माँग भी बढ़ने लगी थी। इसकी पूर्ति भी उपनिवेशों से करने का निश्चय किया गया। इसी प्रकार, तेल, चाय, कॉफी, चीनी आदि की माँग ने भी साम्राज्यवाद को बढ़ावा दिया।

3. यातायात एवं संचार-साधनों का विकास- औद्योगिक क्रान्ति के प्रथम चरण में यातायात एवं संचार-साधनों में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। भाप की शक्ति से चलने

वाले जलपोतों के बन जाने से सुदूरवर्ती देशों से व्यापार करना बहुत ही आसान हो गया। अब तीन सप्ताह के भीतर ही लन्दन से भारत आया जाने लगा। रेल्वे, डाक, तार, टेलीफोन आदि के आविष्कार से प्रत्येक उपनिवेश से व्यापारिक सौदे आसानी से किये जा सकते थे। 1840 के बाद जहाजों में प्रशीतन की व्यवस्था हो जाने से फल, मक्खन, पनीर, अण्डे आदि दूरवर्ती उपनिवेशों से लाना सम्भव हो गया। उपर्युक्त परिवर्तनों ने उपनिवेशों को प्राप्त करने की आकांक्षा को बल प्रदान किया।

4. अतिरिक्त पूँजी के निवेश की समस्या- औद्योगिक क्रान्ति ने यूरोप के लिए समृद्धि के द्वार खोल दिये और कई देश काफी धन-सम्पन्न हो गये। अधिक उत्पादन एवं व्यापार-वाणिज्य की वृद्धि से अधिक लाभ कमाया गया। परन्तु अब इस अतिरिक्त पूंजी के निवेश की समस्या आ खड़ी हुई। यूरोपीय राज्यों में पूँजी की माँग कम होने से उस पूँजी पर बहुत कम ब्याज मिलने की सम्भावना थी। किन्तु वही पूँजी उपनिवेशों में लगाने से दस से बीस प्रतिशत तक लाभ मिलने की सम्भावना थी, क्योंकि अविकसित देशों में मजदूरी सस्ती थी और प्रतियोगी भी बहुत कम थे। इसीलिए बड़े-बड़े बैंकर, व्यापारियों एवं उद्यमियों के साथ मिलकर उपनिवेश स्थापित करने की माँग करने लगे।

5. बढ़ती जनसंख्या का दबाव - उन्नीसवीं सदी के अन्त तक औद्योगिकीकरण को माँग के अनुरूप जनसंख्या में भी काफी वृद्धि हुई। एक अनुमान के अनुसार 1840-1914 ई. के बीच यूरोप की आबादी बढ़कर 45 करोड़ हो गयी। ब्रिटेन तथा स्केंडीनेवियाई देशों में आबादी में तीन गुनी वृद्धि हुई। जर्मनी, नीदरलैण्ड, आस्ट्रिया-हंगरी और इटली की आबादी दुगनी हो गई। इस बढ़ती हुई आबादी को रोजगार देने तथा अतिरिक्त आबादी को बसाने की समस्या दिनों-दिन गम्भीर होती जा रही थी। अतः बड़े-बड़े राज्यों ने अपनी अतिरिक्त जनसंख्या को बसाने और उसे रोजगार उपलब्ध कराने के लिए उपनिवेशों पर अधिकार स्थापित करना ही अच्छा समझा। इन उपनिवेशों में बहुत से लोग सैनिकों के रूप में तथा अनेक प्रशासनिक अधिकारियों के रूप में जाकर रहने लगे; क्योंकि वहाँ उन्नति के अधिक

अवसर उपलब्ध थे। कुछ लोग अपने उद्योग एवं व्यापार के विस्तार के लिए वहाँ बस गये। इस प्रकार, बढ़ती जनसंख्या का दबाव साम्राज्यवाद के प्रसार का एक कारण बन गया।

(घ) राजनीतिक कारण

वस्तुतः राजनीतिक और आर्थिक उद्देश्यों के संयुक्त प्रभाव के कारण ही नये साम्राज्यवाद का विकास हुआ था। इस कार्य में लेखकों, विचारकों, राजनीतिज्ञों, व्यापारियों एवं धर्माधिकारियों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। ये लोग अपने-अपने स्वार्थों की भावना से प्रेरित होकर ही साम्राज्यवाद का समर्थन करते हैं और अपनी-अपनी सरकारों पर साम्राज्यवाद के प्रसार के लिए निरन्तर दबाव बनाये रखते हैं। ऐसे लोगों के वर्ग को साम्राज्यवाद के निहित का वर्ग (Vested interests of Imperialism) कहते हैं।

I. व्यापारिक वर्ग- व्यापारिक वर्ग को हमेशा अपने व्यापार की उन्नति का ध्यान रहता है। प्रत्येक देश में व्यापारियों का एक ऐसा संगठन बन जाता है जो अपनी सरकार पर दबाव डालकर व्यापारिक लाभ के लिए किसी भी कार्य को करने के लिए बाध्य करता है। औद्योगिक क्रान्ति के बाद व्यापारिक संगठन काफी सशक्त हो गये थे जिनमें कपड़े और लोहे से सम्बन्धित संगठनों का महत्त्वपूर्ण स्थान था ये संगठन साम्राज्यवाद के कट्टर समर्थक होते थे और अपने उत्पादनों की बिक्री के लिए नये बाजारों की तलाश में रहते थे। इसी प्रकार अस्त्र-शस्त्र तथा युद्धोपयोगी उपकरण बनाने वाली कम्पनियाँ भी अपने व्यवसाय की उन्नति के लिए साम्राज्यवाद का समर्थन करती थीं। इस काम में बैंकों की भूमिका भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं थी। जब इंगलैण्ड के प्रधानमन्त्री डिजरैली ने स्वेज नहर के शेयर खरीदने का निश्चय किया तो बैंकों ने सरकार को तत्काल धन दे दिया और बाद में सरकार पर दबाव डालते रहे कि मिस्र पर ब्रिटिश अधिकार स्थापित किया जाय।

एशिया में नवीन साम्राज्यवाद का विकास

एशिया में यूरोपीय साम्राज्यवाद अफ्रीका महाद्वीप से पूर्व ही प्रवेश कर चुका था। अफ्रीका का बंटवारा तो यूरोप के देशों के बीच 1871 से पूर्व ही हो गया था। एशिया में यूरोपीय देशों के सामने बंटवारे का तो प्रश्न उत्पन्न हुआ ही नहीं। यहां तो इंग्लैण्ड, फ्रांस, पुर्तगाल,

हालैण्ड, जर्मनी आदि देशों ने जहां मौका मिला वहीं अपनी सैनिक शक्ति व कूटनीति से साम्राज्यवादी उपनिवेश स्थापित कर लिए। एशिया विश्व का सबसे महान् महाद्वीप है। यूरोपवासीयों ने इस अपने राजनीतिक दृष्टिकोण से कई भागों में विभक्त कर लिया और अपने-अपने उपनिवेश स्थापित कर लिए। हम एशिया के साम्राज्यवाद को निम्न शीर्षकों के अर्न्तगत उल्लेखित करने का प्रयास करेंगे।

1. मध्य पूर्व में साम्राज्यवाद
2. सूदूर-पूर्व में साम्राज्यवाद
3. जापान का साम्राज्यवाद
4. रूस का साम्राज्यवाद
5. अमेरिका का साम्राज्यवाद
6. एशिया के दक्षिण पूर्व में साम्राज्यवाद

मध्य-पूर्व में साम्राज्यवाद (ईरान)-

ईरान जो आज राष्ट्रीयता व मुस्लिम संस्कृति के सन्दर्भ में सर्वाधिक चर्चित बना हुआ है वह 1935 से पूर्व विश्व के मानचित्र में इस नाम से उल्लेखित नहीं था। इसे फारस कहा जाता था। यह फारस की खाड़ी के उत्तर-पूर्व में स्थित है। मध्य युग तक इसने अपने प्राचीन सांस्कृतिक गौरव को बनाये रखा। आधुनिक युग में यह एक छोटा सा देश था और इसके निवासी 'पार्स' कहलाते थे। अपने निवासियों के नाम पर यह फारस (Persia) कहलाया। इसके उत्तर में कैस्पियन सागर तथा रूस है और पूर्व में अफगानिस्तान है। इन दोनों (रूस व अफगानिस्तान) देशों ने इसकी राजीनतिक परिस्थियों को काफी प्रभावित किया है। यह शिया-धर्म का केन्द्र है। आज इसने अपनी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति मिस्र की भाँति किसी नदी व नगर के कारण प्राप्त नहीं की है वरन् अपने पैट्रोल उत्पादन के कारण प्राप्त की है। चारों ओर से मुस्लिम देशों से घिरा होने पर भी इसकी संस्कृति व सभ्यता उन देशों से भिन्न है। भाषा व जाति की दृष्टि से भी ईरानवासी अरब के नहीं है।

ईरान की प्राचीन राजनीतिक अवस्था-

- उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में भी यह राजतन्त्र था। भारत में चौदहवी सदी के अन्त में तथा अठारहवीं सदी के पूर्वाद्ध में जो दिल दहला देने वाले वीभत्स आक्रमण हुए थे. वे यहीं के शासकों द्वारा किये गये थे। 1398 ई. में तैमूर लंग ने भारत पर आक्रमण किया था तथा दिल्ली में भयंकर कत्लेआम कर अपना नाम इतिहास में किसी भी रूप में अमर किया। तैमूर लंग के साम्राज्य की राजधानी समरकन्द थी परन्तु फारस उसी के साम्राज्य का एक अंग था।
- 1739 ई. में नादिरशाह ने भारत पर आक्रमण किया और दिल्ली में भंयकर कत्लेआम करके उसने अपना नाम नृशंस-शासकों में लिखवाया था। नादिरशाह भी फारस (ईरान) का ही सुल्तान था। अतः स्पष्ट है कि मध्य-काल में लूट-खसोट की दृष्टि से ईरान (फारस) का स्थान भी महत्वपूर्ण था। साम्राज्यवाद के क्षेत्र में यह काफी बढ़ा हुआ था।
- परन्तु उन्नीसवीं सदी में ईरान के सुल्तान शक्तिशाली नहीं रहे। इस सदी में यह 'कजर' वशं का राज्य था, जिसकी स्थापना अठारहवीं सदी के अन्त में (1779 ई.) में अका मोहम्मद ने की थी। फारस की खाड़ी के आसपास कई मुस्लिम देश हैं। वहां आज शेखों का शासन है। 1869 ई. से 1880 ई. तक के वर्षों में ब्रिटेन ने यहां के प्रायः सभी शेखों के साथ सन्धियां कर ली थीं। उन्नीसवीं सदी में रूस भी इंग्लैण्ड की भांति कट्टर साम्राज्यवादी देश था।
- क्रिमीया युद्ध के उपरान्त रूस का ध्यान टर्की से हटकर मध्य-पूर्व एशिया पर आ जमा था। उसने अफगानिस्तान पर अपना प्रभाव जमाना आरम्भ कर दिया। इंग्लैण्ड को भारत की सदैव चिन्ता रहती थी। अतः वह नहीं चाहता था कि रूस ईरान पर भी अपना प्रभुत्व स्थापित करे! परन्तु रूस ने ईरान को 1828 में ई० में परास्त कर उसे तुर्कमनजई की सन्धि करने को बाध्य कर दिया था। इस सन्धि से रूस का प्रभाव ईरान पर जम गया था और उसने वहां एक्सट्रा-टेरिटोरिएलिटी के विशेषाधिकार प्राप्त कर लिये थे।
- रूस द्वारा फारस क्षेत्रातीत अधिकार (Extra Territorial Right) प्राप्त कर उसी प्रकार नवीन साम्राज्यवाद की दौड़ में प्रवेश कर गया जिस प्रकार पश्चिमी राष्ट्रों ने चीन में टिन्टसिन की सन्धि के अन्तर्गत प्रवेश किया था। इन कारणों से ईरान, ब्रिटेन व रूस की प्रतिद्वन्द्विता का प्रमुख केन्द्र बन गया।

FREE SAMPLE

ईरान का विदेशियों के प्रभाव में आना-

रूस व अफगानिस्तान के (1857 ई.) साथ युद्ध करने से ईरान की आर्थिक अवस्था दयनीय हो गई थी। इस समय वहां का शासक शाह नासिरुद्दीन (Shah Nasiruddin, 1845-96) था। उसने देश की आर्थिक अवस्था सुधारने की हेतु विदेशों से ऋण व आर्थिक सहायता लेने की सोची। इस कारण उसने अंग्रेजों को ईरान में व्यापारिक सुविधाएं प्रदान की। 1872 में ईरान के शाह ने अंग्रेज साहूकार बेरन रायटर को ईरान में रेल व सड़कें निर्माण का ठेका दिया। इनमें व्यय होने वाले धन की वसूली के लिए उसे ईरान चौबीस वर्ष तक चुंगी वसूली का अधिकार उसे ही दे दिया। 1889 ई. में शाह की आज्ञा से इम्पीरियल बैंक ऑफ पर्सिया स्थापित किया गया। इसके लिए उसने ब्रिटेन से ऋण भी लिया। उधर रूस भी ईरान में अपना प्रभाव बढ़ा रहा था। उसने 1879 ई. में अपनी देख-रेख में ईरान में एक सेना तैयार की तथा 1891 ई. में.....

INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO
FREE SAMPLE

नोट – प्रिय पाठकों , **यह एक sample मात्र है** यह अध्याय अभी यहीं समाप्त नही हुआ है, इसमें अभी और भी कंटेंट पढ़ना बाकी है जो आपको **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स में पढने को मिलेगा / यह तो एक sample मात्र ही है/ **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स खरीदने के लिए हमारे संपर्क नंबर पर कॉल करें , धन्यवाद/

संपर्क करें – 8233195718, 9694804063, 8504091672

हमारे नोट्स के अन्य परीक्षाओं में रिजल्ट (Result)-

RAS Pre. परीक्षा 2021 में हमारे नोट्स में से 73/74 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 79 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबरकी दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 103 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 96 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 91 प्रश्न आये

राजस्थान SI 2021 की परीक्षा कि परीक्षा में भी कई प्रश्न आये हैं -

Proof देखने के लिए हमारे youtube चैनल (InfusionNotes) पर इसकी वीडियो देंखें या हमारे नंबरों पर कॉल करें /

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

अध्याय – 5

विश्व युद्धों का प्रभाव

प्रथम विश्वयुद्ध

प्रथम विश्वयुद्ध के प्रारभ होने के कारण-

I.गुप्त संधियाँ - यद्यपि जर्मनी , रूस और आस्ट्रिया में परस्पर संधि हो चुकी थी , किंतु जर्मनी को रूस पर किन्हीं कारणों से विश्वास नहीं हो सकता था । उसने 1879 में आस्ट्रिया से एक गुप्त संधि कर ली । 1882 में इटली ने भी जर्मनी एवं आस्ट्रिया से संधि कर ली और इस प्रकार ' त्रिराष्ट्रीय गुट ' का जन्म हुआ । बिस्मार्क ने अपनी कूटनीति से रूस और फ्रांस में वैमनस्य बनाये रखा , किंतु 1890 में उसके पतन के साथ रूस और फ्रांस एक - दूसरे के निकट आ गये और 1894 में उनका परस्पर समझौता हो गया । इसी समय इंग्लैण्ड भी अपने एकान्तवास की नीति का त्याग कर जर्मनी का अनुसरण करने लगा । उसने भी अन्य राज्यों से समझौता करके अपनी शक्ति को सुदृढ़ करने का प्रयत्न किया । जब उसका जर्मनी से समझौता आसान न रह गया , तो उसने 1902 में जापान से , 1904 में फ्रांस से और 1907 में रूस से संधि कर ली और इस प्रकार ' त्रिराष्ट्रमैत्री संघ ' का निर्माण हो गया । इन गुटबन्दियों के फलस्वरूप यूरोप का दो गुटों में विभाजन हो गया जो एक - दूसरे के घोर शत्रु थे । इन दोनों गुटों के कारण प्रथम महायुद्ध आवश्यक हो गया ।

प्रो . फे का कथन है कि , " युद्ध का सबसे महत्वपूर्ण अन्तर्निहित कारण गुप्त संधियों की प्रणाली थी जिसका विकास फ्रांस और प्रशा के युद्ध के बाद हुआ था । इसने धीरे - धीरे यूरोप की शक्तियों को ऐसे दो विरोधी गुटों में बांट दिया जिनमें एक दूसरे के प्रति । सन्देह बढ़ता रहा और जो अपनी सेना एवं नौसेना की शक्ति बढ़ाते रहे । " ।

2.उपनिवेशवाद -यूरोप का प्रत्येक देश विदेशों में अपने उपनिवेश स्थापित करना चाहता था , जिससे अंतर्राष्ट्रीय प्रतिद्वन्द्विता का आविर्भाव हुआ । जर्मनी और इंग्लैण्ड में यह

प्रतिद्वन्द्विता अपनी चरम सीमा पर पहुंच गई । वे विश्व के प्रत्येक कोनों में बाजारों को स्थापना के लिए प्रयत्नशील थे । वे एक - दूसरे के विरोधी बनते जा रहे थे । वे अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या को बसाने के लिए उपनिवेशों की खोज में थे । यूरोप में औद्योगिक क्रांति का प्रारंभ हो चुका था । सभी देशों में उद्योगों का विकास हो रहा था । तैयार माल की खपत के लिए भी उपनिवेशों की आवश्यकता थी । इंग्लैण्ड एवं जर्मनी उपनिवेशों की प्राप्ति के लिए अत्यधिक संघर्ष कर रहे थे । इस दिशा में फ्रांस , इटली , रूस आदि देश भी प्रयत्नशील थे । अतः उपनिवेश के प्रश्नों को लेकर विरोधी गुटों के बीच संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गयी ।

3.सैनिकवाद - सन् 1871 - 1914 का काल यूरोप में घोर सैनिकवाद के विकास का काल था । अत : यह काल इतिहास में सशस्त्र क्रांति का युग कहा जाता है । इस समय दोनों गुटों में अपनी सेना एवं नौसेना बढ़ाने की दौड़ हो रही थी । प्रत्येक राष्ट्र अपने देश में युद्ध की अनिवार्यता एवं लाभों का प्रचार कर रहा था । जर्मनी की बढ़ती हुई शक्ति को देखकर इंग्लैण्ड ने यह निश्चय कर लिया था कि यदि जर्मनी एक जहाज बनाता है तो वह छः जहाज बनायेगा । विलियम द्वितीय ने घोषित किया था कि जर्मनी का भविष्य समुद्र पर निर्भर करता है । उसने अपनी सेना के सम्मुख अनेक बार उत्तेजनात्मक भाषण दिये । इससे अन्य देशों में बहुत चिंता उत्पन्न हो गई । 1904 के बाद नौसेना के निर्माण की प्रतिद्वन्द्विता का कारण ही इंग्लैण्ड तथा जर्मनी के बीच कटुता बढ़ने लगी । जर्मनी के पास 8 , 50 , 000 सैनिक थे । रूस के पास भी शांति काल में 15 लाख सैनिक थे । उन देशों ने भी सैनिक संगठन पर जोर देना आरंभ कर दिया । प्रत्येक देश में संगठित वर्ग का विकास हो गया । प्रत्येक देश में नौसेना का प्रभाव बढ़ गया । इस प्रकार सैनिकवाद का वह दौड़ पर्याप्त सीमा तक प्रथम महायुद्ध के लिए अनिवार्य बन चुकी थी ।

5 . जनमत की अवहेलना - जनता में अत्यधिक असन्तोष व्याप्त हो रहा था । यूरोप के राज्यों में अधिकारी वर्ग ही शासन कार्यों को करता था । यही नहीं , व्यवस्थापक विभाग के अनेक कार्यों के बारे में जनता कोई जानकारी ही नहीं रख पाती थी । मन्त्रिमण्डल को बिना बनाये हुए गुप्त संधिया कर ली जाती थी । जनवरी , 1906 में इंग्लैण्ड के सर एडवर्ड ग्रे ने फ्रांस के साथ संधि की बातचीत की जो कि पूर्णतः गुप्त रही , जिसका पता संसद

को भी 1912 तक न लग सका । सम्राट एवं विदेश मंत्री ही संधियां कर लिया करते थे । इसलिए जनता अपनी सरकार के प्रति विश्वास नहीं रखती थी । जनता की इच्छा कभी युद्ध करने की नहीं होती थी । वह शांति चाहती थी , लेकिन सम्राटों को साम्राज्य एवं रक्त की पिपासा होती है । जनमत के विचारों के विरोध से भी युद्ध की आशंकाएं समाप्त न हो सकी । इस कारण युद्ध होना अनिवार्य हो गया था ।

5. कूटनीतिक कारण - कूटनीति के दाव - पेचों ने भी अंतर्राष्ट्रीय तनाव को बढ़ाया था । बिस्मार्क ने जर्मनी में त्रिगुट की स्थापना की जिसके प्रत्युत्तर स्वरूप ' त्रिराष्ट्रमैत्री संघ ' का जन्म हुआ और उनमें परस्पर कभी बाल्कन प्रायद्वीप के प्रश्न को लेकर तथा कभी मोरक्को की समस्या को लेकर तनाव बढ़ता ही गया । यद्यपि कूटनीति प्रत्यक्ष रूप से युद्ध का कारण न बन सकी , फिर भी युद्ध की परिस्थितियों को जन्म देने में उसका महत्वपूर्ण स्थान रहा । उसने यूरोप के समस्त देशों को संधियों के एक ऐसे जाल में बांध कर रखा था कि एक युद्ध करता , तो दूसरों को स्वतः ही उसमें सम्मिलित हो जाना पड़ता था । गुटबन्दियों से पूर्व बड़े बड़े राष्ट्र सम्मेलनों के द्वारा प्रारंभिक झगड़ों को निपटा लेते थे , किन्तु अपनी ही प्रतिष्ठा को सर्वोपरि समझने वाले तथा औचित्य की भावना से हीन गुटों के निर्माण ने इस कार्य को असम्भव बना दिया ।

6 . फ्रांस की प्रतिशोध की भावना - जर्मनी ने 1871 ई . में फ्रांस के अल्सेस एवं लॉरेन प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था । उस समय एक बड़ी हर्जाने की रकम को न देने की अवधि तक अपने व्यय पर जर्मन सेना रखने की शर्ते भी लादी गयी थी । नेपोलियन महान् के राष्ट्र का अतीव अपमान किया गया था । फ्रांस को टुकड़ों में विभाजित कर दिया था । अल्सेस एवं लॉरेन उसके दो बच्चों के समान थे , जो माता की गोद में जाने के लिए तड़प रहे । थे और माता उनको वक्षस्थल से चिपटाने को तरस रही ....

• प्रथम विश्व युद्ध के प्रभाव –

1. वर्साय की संधि

a) मित्र राष्ट्रों ने जर्मनी के विरोध पत्र पर विचार करने के बाद संधि की शर्तों में सामान्य परिवर्तन किये और संशोधित संधि पत्र जर्मनी को भेज दिया गया और पाँच दिन का समय देते हुए कहा कि यदि उसने इस अवधि में उसे स्वीकार नहीं किया तो उस पर आक्रमण कर दिया जायेगा। इस कार्य ने आग में घी का काम किया और जर्मनी में चारों ओर क्षोभ की लहर फैल गयी।

b) संधि की शर्तें इतनी कठोर थी कि इसे स्वीकार करने के उपेक्षा जर्मनी के बहुत से नागरिक मित्र राष्ट्रों के विरुद्ध लड़ते हुए नष्ट हो जाना अधिक श्रेयस्कर समझते थे।

c) किन्तु महासेनापति हिन्डनबर्ग ने स्पष्ट कर दिया कि मित्र राष्ट्रों के विरुद्ध लड़कर जीतना असम्भव है। प्रधानमंत्री शीडमॅन ने संधि को अस्वीकार करते हुए त्याग पत्र दे दिया।

d) अन्त में नवगठित सरकार ने, जिसमें गुस्टावबॉर प्रधानमंत्री तथा मूलर विदेशमंत्री थे, संधि पर हस्ताक्षर करना स्वीकार कर लिया।

e) जर्मन प्रतिनिधि जब अन्तिम बार, 28 जून, 1919 को हस्ताक्षर करने वर्साय महल आये तो उन्हें पहले की भाँति ही अपमानित होना पड़ा। उन्हें बन्दियों की भाँति रखा गया। मित्र राष्ट्रों ने यह निश्चय किया कि जर्मनी के साथ संधि पर हस्ताक्षर वर्साय के उसी राजप्रासाद के शीशमहल में हो,

f) जहाँ फ्रांस को हराने के बाद 1871 ई. में प्रशा के राजा को फ्रांस का सम्राट घोषित किया था। इस अपमान का घुँट भी प्रतिनिधियों को पीना पडा। जर्मनी की ओर से हर्मन मूलर तथा जोहानसबेल ने संधि पर हस्ताक्षर किये।

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

वर्साय की संधि की शर्तें –

वर्साय की संधि 15 भागों में विभक्त भी और उसमें 440 अनुच्छेद थे। जैसा पहले बताया जा चूका है कि उसके प्रथम भाग में राष्ट्रसंघ की स्थापना, संगठन एवं कार्यों का उल्लेख किया गया था।

(क) प्रादेशिक व्यवस्थाएँ

(i) जर्मनी को अल्सेस लॉरेन के प्रान्त फ्रांस को देने पड़े।

(ii) जर्मनी की सीमा पर स्थित मेलमिडे और यूपेन बेल्जियम को दे दिये गये।

(iii) खनिज पदार्थों से अति-सम्पन्न सार घाटी दोहन हेतु 15 वर्षों के लिए फ्रांस को दे दी गई। किन्तु सार-प्रदेश पर नियंत्रण राष्ट्रसंघ का स्थापित किया गया और वहाँ का शासन चलाने के लिए एक आयोग नियुक्त किया गया। 15 वर्ष बाद जनमत संग्रह द्वारा यह निर्णय होना था कि सारवासी फ्रांस के साथ मिलना चाहते हैं या जर्मनी के साथ या राष्ट्रसंघ के शासन में रहना चाहते हैं।

(iv) जर्मन अधिकृत श्लेसविग में जनमत संग्रह किया गया। उसके आधार पर उत्तरी श्लेसविग डेनमार्क को दिया गया और दक्षिणी श्लेसविग जर्मनी के पास रहा।

(v) जर्मनी को पूर्वी सीमा पर सबसे अधिक नुकसान उठाना पड़ा। मित्र राष्ट्रों ने युद्ध समाप्ति के बाद एक स्वतंत्र पोलैंड के निर्माण का निश्चय किया था। विल्सन के चौदह सूत्रों में भी स्वतंत्र पोलैंड के निर्माण का उल्लेख किया गया था। अतः पेरिस सम्मेलन में जर्मनी, आस्ट्रिया और रूस के पोल क्षेत्रों को लेकर स्वतंत्र पोलेंड का निर्माण किया गया। पोसेन के प्रान्त का 5/6 भाग तथा पश्चिमी प्रशा का अधिकांश भाग पोलैंड को प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त उत्तरी साइलेशिया का एक बड़ा भाग जनमत संग्रह के आधार पर पोलैंड को दे दिया गया। पोलैंड के नवनिर्मित राज्य का समुद्र तट से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए जर्मनी को डेन्जिग का बन्दरगाह राष्ट्रसंघ के संरक्षरण में छोड़ना पड़ा। डेन्जिग के चारों ओर का 700 वर्ग मील का क्षेत्र मिलाकर उसे स्वतंत्र नगर घोषित किया गया और उसका शासन चलाने के लिए राष्ट्रसंघ द्वारा एक आयुक्त की व्यवस्था की गयी।

(vi) जर्मनी को बाल्टिक सागर तट पर स्थित मेंमल का बन्दरगाह इसलिए राष्ट्रसंघ को सौंपना पड़ा ताकि लिथुआनिया को स्थानान्तरित किया जा सके।

(vii) नवनिर्मित राज्य बेल्जियम, पोलैंड और चेकोस्लोवाकिया की स्वतंत्रता और प्रभुसत्ता को जर्मनी ने मान्यता दी।

(viii) जर्मनी ने चेकोस्लोवाकिया को ऊपरी साइलेशिया का एक छोटा-सा क्षेत्र भी हस्तान्तरित किया।

(ix) जर्मनी को समुद्रपार के अपने विस्तृत उपनिवेशों पर सारे अधिकार मित्र राष्ट्रों को देने के लिए विवश किया गया और वे उपनिवेश ब्रिटेन, फ्रांस जापान आस्ट्रिया न्यूजीलैण्ड अफ्रीका और बेल्यिजयम को आपस में बाँट दिये गए। जापान को क्याओ-चाओ और शाण्टुंग प्रान्त में जर्मनी की बस्तियाँ पट्टे पर दी गई। न्यूजीलैण्ड को सैमोआ द्वीप का जर्मन-भाग दिया गया। इंग्लैण्ड को पश्चिम अफ्रीका का जर्मन भाग मला कैमरून और टोगालैण्ड को फ्रांस और इंग्लैण्ड ने आपस में बाँट लिया। जर्मन अधिकृत दक्षिण-पश्चिम अफ्रीका का प्रदेश दक्षिण अफ्रीका को सौंपा गया।

(x) जर्मनी ने चीन, थाईलैण्ड, मिश्र, और लिवेरिया में अपने अधिकार और विशेष सुविधाएँ भी छोड़ना स्वीकार किया। मित्र राष्ट्रों ने समुद्र पार रहने वाले जर्मन नागरिकों तथा कम्पनियों की सारी सम्पत्ति अधिकार और हितो को रखने तथा बेचने का अधिकार अपने हाथ में ले लिया। बल्गारिया और तुर्की में जर्मनी की सम्पत्ति और सूविधाएँ जब्त कर ली गई।

(xi) ब्रेस्ट लिटोवस्क सन्धि के द्वारा जर्मनी ने एक बड़ा भाग रूस से छीनकर अपने राज्य में मिला या था। किन्तु वर्साय की सध्न्ध द्वारा इस विस्तृत प्रदेश पर लैटविया, एस्ओनिया और लिथुआनिया की स्थापना की गई।

(ख) सैनिक व्यवस्थाएँ

(I) जर्मनी में अनिवार्य सैनिक सेवा समाप्त कर दी गई।

(ii) जर्मनी की स्थल सेना की संख्या अधिकारियों सहित एक लाख निर्धारित की गयी। यह भी व्यवस्था की गयी कि अधिकारियों को कम से कम 25 वर्ष और साधारण सैनिको

INFUSION NOTES WHEN ONLY THE BEST WILL DO FREE SAMPLE

को कम से कम 12 वर्ष सेना में रहना पड़ेगा। यह व्यवस्था इसलिए की गयी ताकि अधिक व्यक्ति सैनिक शिक्षा न ले सके।

(iii) जर्मनी में अस्त्र-शस्त्र, गोला-बारूद आदि के उत्पादन को अत्यन्त सीमित कर दिया गया तथा उसे इन वस्तुओं को आयात करने की मनाही कर दी गई।

(iv) राइन नदी के पूर्वी तट पर जर्मनी को किलेबन्दी करने की आश नहीं दी गई और उसके पश्चिमी तट पर 50 किलोमीटर क्षेत्र का विसैन्यीकरण कर दिया गया। उस क्षेत्र में उसके सभी किलों को तोड़ दिया गया।

(v) जर्मनी को किसी भी प्रकार की वायुसेना रखने का भी निषेध कर दिया गया।

(vi) जर्मनी की नौ-सैनिक शक्ति को भी सीमित किया गया। जर्मनी कुल 6 युद्धपोत, 6 लडाकु विमा, 12 तोपची जहाज और टारपीडो नायें ही रख सकता था। उसे एक भी पनडुब्बी रखने की इजाजत नहीं थी। उसे समुद्री सेना में अधिकारियों समेत 15000 सैनिक रखने की ही इजाजत दी गयी। जर्मनी के व्यापारिक जहाज को समुद्री शिक्षा देना वर्जित था। यह व्यवस्था की गई कि सारे फालतू जहाजों को या तो व्यापारिक जहाज बना दिया जायेगा या नष्ट कर दिया जायेगा। या मित्र राष्ट्रों को सौंप देना पड़ेगा।

(vii) जर्मनी के हेलिगोलैंड के बन्दरगाह की किलेबन्दील नष्ट करना भी तय हुआ।

(viii) मित्र राष्ट्रों को निःशस्त्रीकरण सम्बन्धी धाराओं को कार्यान्वित करने के लिए अन्तर्मित्र राष्ट्रीय आयोगों की नियुक्ति का भी अधिकार दिया गया। इन आयोगों को जर्मनी के किसी भी भाग मं जाने और निःशस्त्रीकरण सम्बन्धी सूचना प्राप्त करने के व्यापक अधिकार दिये गये।

ग) अन्य व्यवस्थाएं

(1) जर्मनी की प्रमुख नदियाँ एल्व, ओडर, नीमन और डेन्यूब को अन्तर्राष्ट्रीय घोषित कर दिया गया और उन पर नियंत्रण रखने के लिए विशेष आयोग गठित किये गये। राइन नदी को भी एक अन्तर्राष्ट्रीय आयोग के अधिकार में रखा गया।

(ii) जर्मनी को अपने प्रमुख बन्दरगाह हेम्बर्ग और स्टैटिन में चेकोस्लोवाकिया की व्यापारिक सुविधा के लिए सतंत्र क्षेत्र देने को बाण्य किया गया। कील नहर और इसके मार्ग को सब राष्ट्रों के लिए खोल दिया गया।

(iii) जर्मनी के सम्राट विलियम द्वितीय पर अन्तर्राष्ट्रीय सदाचार तथा सन्धियों के विरुद्ध घोर अपराध करने का अभियोग लगाया गया। किन्तु नीदरलैंड की सरकार ने सम्राट विलियम द्विनीय को समर्पित करना अस्वीकार कर दिया। इसलिए उस पर मुकदमा नहीं चलाया जा सका।

(iv) जर्मनी को प्रथम विश्व युद्ध का उत्तरदायित्व स्वीकार करना पड़ा। सन्धि की 231 वीं धारा इस प्रकार थीं "मित्र और सम्मिलित राष्ट्र अभियोग लगाते हैं और जर्मनी अपनी ओर अपने साथियों की ओर से स्वीकार करता है कि जर्मनी और उसके साथियों द्वारा जबरदस्ती लादे हुए युद्ध के कारण मित्र तथा सम्मिलित राष्ट्रों के नागरिको को जो भी हानि और नुकसान आ है, उसका उत्तरदायित्व जर्मनी तथा उसके साथियों का ही है।"

(v) क्षति का स्वरूप और उसके लिए वसूल की जाने वाली धनराशि के निर्धारण के लिए एक 'क्षतिपूर्ति आयोग' बैठाने की व्यवस्था की गयी।

(vi) युद्ध में नष्ट हुए प्रदेशों के पुनर्निर्माण के लिए जर्मनी के आर्थिक साधनों का प्रयोग किया जाना तय हुआ। जर्मनी ने फ्रांस, इटली, बेल्जियम और लक्जैम्बर्ग को कोयला की निर्धारित मात्रा देना स्वीकार किया। इसके अतिरिक्त उसे फ्रांस को कुछ रासायनिक पदार्थ, जैसे- अमोनियम सल्फेट, कोलतार आदि भी देने का वचन देना पड़ा।

(vii) यह भी सुनिश्चित हुआ कि क्षतिपूर्षि के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय होने तक जर्मनी की सरकार 1921 ई. तक 5 अरब डालर धनराशि देगी।

(viii) विभिन्न जर्मन उपनिवेशों में और मित्र राष्ट्रों में जो भी सरकारी और गैर सरकारी पूंजी थी, वह जब्त कर ली गयी।

(ix) मित्र राष्ट्रों के क्षतिग्रस्त अथवा विनष्ट क्षेत्रों के पुनर्निर्माण के लिए जर्मनी द्वारा पर्याप्त मात्रा में मशीनें, औजार और पत्थर, ईट, लकड़ी स्टील सीमेंन्ट चूना आदि सामग्री दी जाने की व्यवस्था की गयी। इसके अतिरिक्त यह भी निश्चित किया गया कि सन्धि

लागू होने की 3 माह की अवधि के भीतर जर्मनी फ्रांस और बेल्जियम को भारी संख्या में पशुधन देगा।

2. राष्ट्र संघ (League of Nation) का निर्माण-

परिचय

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, जो विश्व के किसी भी राष्ट्र में रहता हो, परंतु वह शांति से जीवन यापन करना चाहता है। संसार में समय-समय पर युद्ध होते रहते हैं, और फिर संधि व समझौते भी होते हैं। यह प्रक्रिया निरंतर

नोट – प्रिय पाठकों , **यह एक sample मात्र है** यह अध्याय अभी यहीं समाप्त नही हुआ है, इसमें अभी और भी कंटेंट पढ़ना बाकी है जो आपको **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स में पढ़ने को मिलेगा / यह तो एक sample मात्र ही है/ **RAS मुख्य परीक्षा के** कम्पलीट नोट्स खरीदने के लिए हमारे संपर्क नंबर पर कॉल करें , धन्यवाद/

संपर्क करें – 8233195718, 9694804063, 8504091672

हमारे नोट्स के अन्य परीक्षाओं में रिजल्ट (Result)-

RAS Pre. परीक्षा 2021 में हमारे नोट्स में से 73/74 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 79 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 23 अक्तूबरकी दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 103 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की पहली शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 96 प्रश्न आये

पटवारी परीक्षा 2021 में 24 अक्तूबर की दूसरी शिफ्ट में हमारे नोट्स में से 91 प्रश्न आये

राजस्थान SI 2021 की परीक्षा कि परीक्षा में भी कई प्रश्न आये हैं -

Proof देखने के लिए हमारे youtube चैनल (InfusionNotes) पर इसकी वीडियो देंखें या हमारे नंबरों पर कॉल करें /

FREE SAMPLE
INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

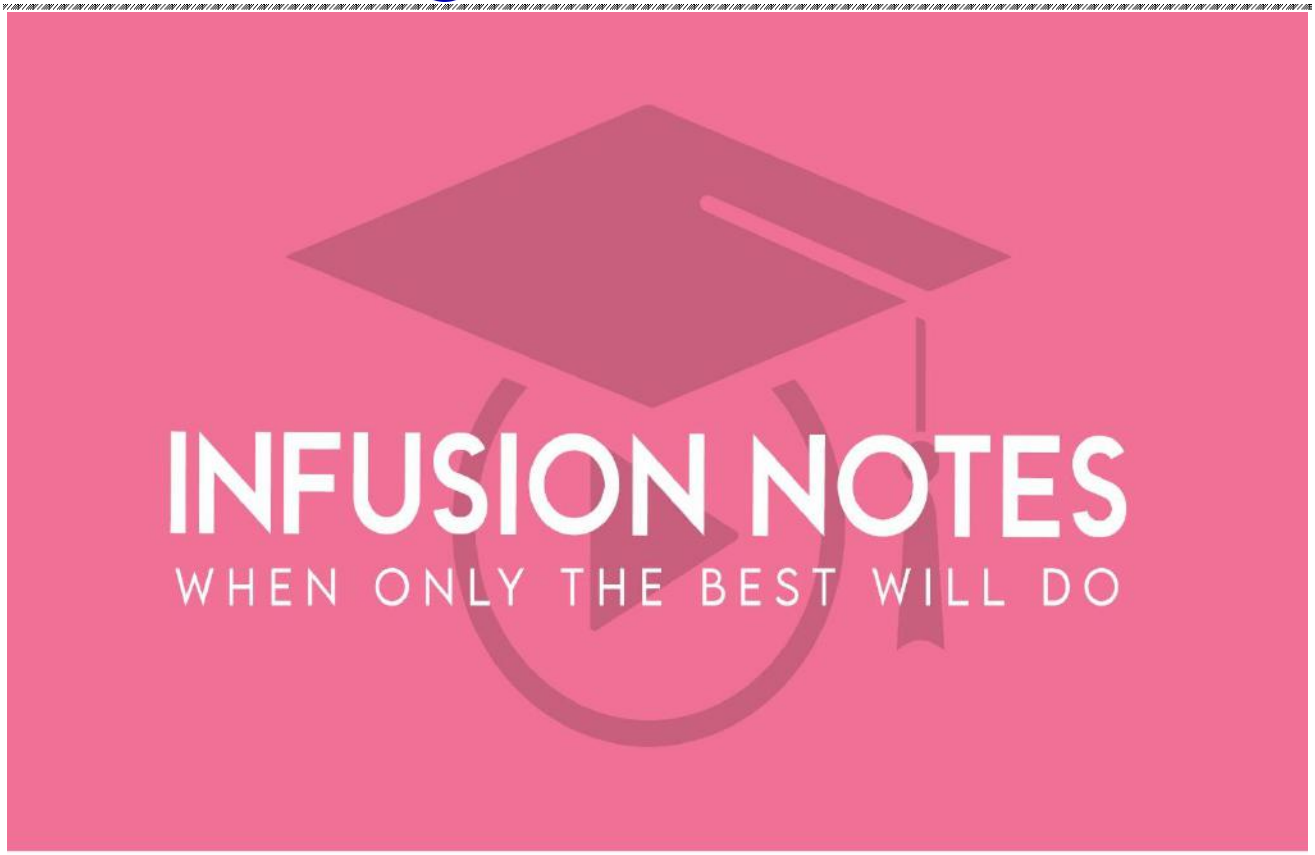

AVAILABLE ON/

01414045784

contact@infusionnotes.com

http://www.infusionnotes.com/